CC0 In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सं. २३५
११०६

आर्य मार्ग मार्तण्ड

6.1
V

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री १०८ चारित्र चक्रवर्ती सुमतिसागर जी महाराज
द्वारा संग्रहीत

आर्ष मार्ग मार्तण्ड

सं. २१५

श्री १०८ चारित्र चक्रवर्ती सुमति सागर जी महाराज के भादवां में
१६ सोलहकरण के ३२ दिन के उपवास के पारणा
के उपलक्ष में श्रीमान् स्व० गुलाबचंदजी जैन
राहचतरा निवासी वालों की धर्मपत्नी
श्रीमती रजनी देवी जैन की
ओर से सप्रेम भेंट।

श्री गणेश वर्णी दि. जैन (शोध) संस्थान
पुस्तक सं० 1205
दिनांक ....

प्रकाशक :—
गोविंदराम जैन
श्री १०८ चारित्र चक्रवर्ती सुमतिसागर संघ

ती भादों सुदी १५ वीर
सं २५१७ वि० सं० २०२८

मूल्य स्वाध्याय और
मनन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

卐

पूज्य श्री १०८ चारित्र चक्रवर्ती सुमतिसागरजी महाराज

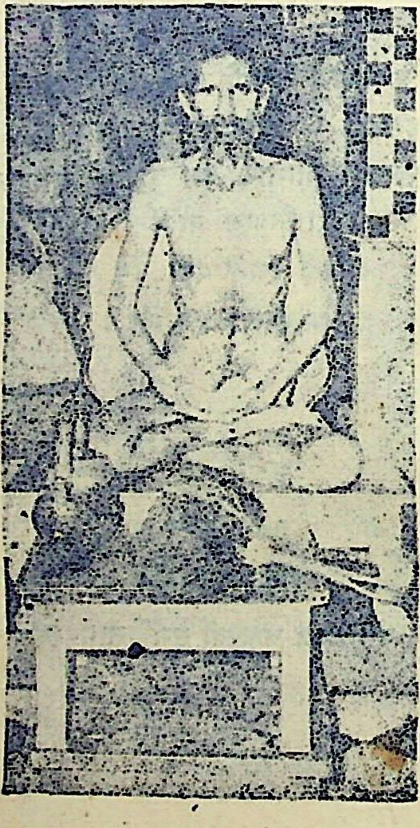

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुस्तक सं० ११०५
दिनांक..................

॥ गुरु वंदना ॥

श्री सुमत सुमत के करतार हमारी पीर हरो ।
जिला मुरैना वाले श्यामपुरा के अवतारी, हमारी पीर हरो ।
छिद्दूमल के प्यारे गरभ चिरोंजा के अवतारी, हमारी पीर हरो ।
श्री सुमत सुमत के करतार हमारी पीर हरो ॥
जन्म जैसवाल गोत्रे भन्डारी वाले, हमारी पीर हरो ।
परिवार हरा-भरा छोड़ा घर में छोड़ी सम्पति सारी, हमारी पीर हरो ।
गुरु विमल सागर से दिगम्बर दीक्षा धारी, हमारी पीर हरो ।
श्री सुमत सुमत के करतार, हमारी पीर हरो ।
देश विदेश में जाकर देते उपदेश जो भारी । हमारी पीर हरो ।
बाबरपुर में आये कलाकार की पीर निवारी, हमारी पीर हरो ।
श्री सुमत सुमत के करतार हमारी पीर हरो ॥
जै के जैन अरदास करत है भारी ।
श्री सुमत सुमत के करतार हमारी पीर हरो ॥

दोहा :— दो पग घुटुअन से नवें टोहनी से दो हाथ ।
मन वचन उर सर नवाकर ज्ञान सुमत को नमस्कार ॥

नं० २९५

भजन

हमें सुमती स्वामी तुम्हारा सहारा ।
श्यामपुरा के राजदुलारे छेदीलाल के प्राणों प्यारे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो दर्शन दिये फिर दुवारा भी देना ।
वह 'चिरौंजा' के आंखों के तारे ॥ १ ॥
सुना करती थी जो तारीफ तुम्हारी ।
तो वैसा ही पाया नजारा तुम्हारा ॥ २ ॥
अजब मुस्कुराहट अजब शान तेरी ।
अजब नूर प्यारा, है स्वामी तुम्हारा ॥ ३ ॥
जो छीना है दिल को न दिल को हटाना ।
हटा लोगे दिल को न होगा गुजारा ॥ ४ ॥
करो सेवकों की स्वामी रक्षा ।
सब प्राणियों को सहारा तुम्हारा ॥ ५ ॥
दया हम पे करना दया के हो सागर ।
करोगे तुम्हीं भव सागर से पारा ॥ ६ ॥
सिवा प्रेम के हम पे देने को है क्या ।
झुका शीश चरणों में स्वामी हमारा ॥ ७ ॥
रामदेवी बाई चरणों में आई
क्षमा हमपे करना क्षमा चाहती हूँ
बड़े प्रेम से निर्मल पुकारूँ ॥

गजल

मुझे दृष्टि आतम सुहाई हुई है ।
मेरे तन में मन जमाई हुई है ।
तेरा ध्यान अनुपम जो पाता खुशी है ।
उसी हृदय में सुनाई हुई है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नगर द्वारा वन में सकल थान ढूंढा ।
छटा उस प्रभु की जो छाई हुई है ।
सकल सभी रग देखे न वह रंग पाया ।
कि जिस रंग में जो रंगाई हुई है ।
सकलतत्व निर्भय समा बाँध रहते ।
जहां गुपा अगम की समाई हुई है ।
जो आनन्द गुण में सदा तृप्त रहते ।
उन्हीं को परम लब्ध आई हुई है ।

[❀]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री १०८ मुनि सुमति सागर जी महाराज

विदित हो कि आपका गृहस्थ जीवन का नाम नत्थीलाल जी था। आपके पूज्य पिता जी का नाम श्री छिद्दूलाल जी व माता जी का नाम श्रीमती चिरोंजा देवी था। आप अपने परिवार में चार सगे भाई तथा एक बहिन हैं। भाई झुन्नीलाल, बाबुलाल, रामस्वरुप तथा कलावती बहिन का नाम है। आपकी धर्मपत्नी का नाम रामश्री देवी है। आपके दो पुत्र बारेलाल, भागचन्द व एक पुत्री कपूरी बाई का विवाह हो चुका है तथा एक पुत्री शकुन्तला बाई कुमारी है। आप जैसवाल जैन हैं। आपका गोत्र भण्डारी है। आपका जन्म शुभ मिती आसोज सुदी ६ वि० स० १९७५ में ग्राम श्यामपुरा, परगना अम्बाह (जिला मुरैना) में हुआ था। अपने भरे पूरे परिवार का परित्याग कर दिगम्बरी दीक्षा धारण की है। आपकी जीवनी इस प्रकार हैं :—

आपकी बाल्यकाल से ही धर्म में लगन थी। आप काश्तकारी आढ़त तथा घी का अच्छा मध्यम व्योपार करते थे। आपका विवाह वि० स० १९८४ में हुआ था और विवाह के थोड़े दिन बाद ही आपको राम दुलारे डाकू हरण कर ले गया था। १४ दिन के अन्दर आप गिरोह से भाग आये। आप सं० २०१० वि० में गांव से मुरैना आकर रहने लगे और दूकानदारी का कार्य करते रहे। पुण्योदय से श्री १०८ आचार्य विमलसागर जी महाराज संघ सहित मुरैना में पधारें। उसी समय आपकी धर्मपत्नी ने आप से पूछा कि आचार्य श्री को आहार देने की

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मेरी इच्छा है। अगर आप आज्ञा दें तो मैं शूद्र जल का त्याग ले लूं और आप भी ले लीजिए। तब आप (नत्थीलाल) ने कहा आप से बने तो आहार दो, हम से तो कुछ नहीं बनता। तब आपकी धर्मपत्नी ने शूद्र जल का त्याग कर दिया और ज्ञानबाई के साथ आहार दिया। फिर आपकी धर्मपत्नी ने कहा अब हम अपने मकान पर आहार बनायेंगे। आप महाराज को ले तो आवेंगे। तब दूसरे दिन घर पर आहार बनाया व आप महाराज को लेकर घर आ गये और खड़े रहे, महाराज भी खड़े रहे। महाराज की निगाह आप पर पड़ी तो आपने कहा—महाराज मुझसे त्याग नहीं बनेगा तब महाराज लौटने लगे। तब आपने सोचा कि मेरे घर से महाराज बिना आहार लिये लौट गए। तो मेरा जैन कुल में उत्पन्न होना ही बेकार है। फिर क्या था उसी समय आपके भाव जगे और उसी समय आपने शूद्र जल का त्याग किया व आचार्य श्री को आहार दिया।

आहार देने के बाद भावना हुई कि अब और त्याग करते जायेंगे। फिर पं० मक्खनलालजी की संगति में रहने लगे व शास्त्र अध्ययन करते रहे। सं० २०२१ में श्री १०८ शान्तिसागर जी महाराज से दूसरी प्रतिमा धारण की व वि० सं० २०२३ में एक मकान खरीदा और इसी वर्ष मुरैना में गजरथ पंचकल्याणक महोत्सव हुआ। इस अवसर पर श्री १०८ विमल सागर जी महाराज पधारे। इनसे आपने सातवीं प्रतिमा ली और इसी तरह आप त्याग की ओर बढ़ते गए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संसार को अथिर जानकर आपने अपने मनमें मुनि दीक्षा लेने की धारणा बनाली। सं० २०२४ में फागुन सुदी १२ को सोनागिर गए। वहां श्री १०८ निर्मलासागर जी से मुनि दीक्षा लेने का विचार किया मगर श्री १०८ मुनि विमलसागर जी की आज्ञा न पाकर बाद में रेवाड़ी पहुँचे। वहां पर श्री १०८ मुनि विमलसागर जी महाराज से चैत सुदी १३ वि० सं० २०२५ को ऐलक दीक्षा ली और आपका श्री १०५ वीर सागर नामकरण हुआ। वहां से विहार करके श्री गुरु जी के साथ देहली पधारे। वहां पर चातुर्मास किया। इसी अवसर पर सर्व प्रथम सावन सुदी ११ को केशलोंच के समय आप बड़े शान्त चित्त दिखलाई दे रहे थे। थोड़ी देर में आपने केश लोंच कर डाला, उस समय आपकी जय जयकार से आकाश गूँज उठा। चतुर्मास के बाद संघ के साथ-साथ आप गजियाबाद पधारे। अगहन बदी १२ वि० सं० २०२५ को दूसरा केशलोंच हुआ। उसी समय श्री गुरु जी से मुनि दीक्षा हेतु प्रार्थना की और उसी समय श्री १०८ मुनि विमलसागर जी महाराज ने मुनि दीक्षा दे दी। फिर आपका दीक्षित नाम श्री १०८ मुनि सुमति सागर जी महाराज रक्खा गया।

धन्य है आपकी धर्म पौरुषता को, कि चन्द दिनों में ही आपने सर्व परिग्रह त्याग कर भरा पूरा परिवार छोड़कर निरग्रन्थ मुनिपद प्राप्त कर लिया। इससे समाज भी धन्य हुआ और अपने परिवार का नाम उज्जवल किया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आपकी विशेषतायें व धर्म का फल

आप ६ साल पहले श्री सम्मेद शिखर जी की वन्दना के लिए गये थे। सो पहाड़ पर श्री पार्श्वनाथ के मन्दिर में आपने ब्रह्मचर्य व्रत लिया था और आपकी पत्नी ने शीलव्रत लिया था। और आपने प्रतिज्ञा की थी कि भगवान मैं पैदल आकर श्री सम्मेद शिखर जी की वन्दना करूँ। सो अब आप पैदल शिखर जी की वन्दना करने जा रहे हैं।

उपसर्ग व धर्म प्रभावना

१–नदी चम्बल में आप डूबने से बच गए व साथ की दो बाई डूब कर मर गई।

२–डाकुओं के साथ आप डाकुओं के घेरे में थे। जब पुलिस से गोली चली आपके चरणों में गोली आते ही ठण्ढी पड़ जाती थी।

३–चोरों ने जंगल में घेर लिया, मारने को थे इतने में पुलिस मिलिटरी आ गई और चोर पकड़ लिए गए पर आपने चोरों को सजा न होने दी।

४–बारहबंकी में चातुर्मास किया। वहाँ से सम्मेद शिखर की वंदना करते हुए कोडरमा में प्रभावना हो रही है। जनता इसका लाभ उठा रही है। भागलपुर सिखजी आये वहा अघ-वन में ब्रह्मचारी हल्लाल राजस्थान खेड़ी वारे ने छुल्लक दीच्छा ली नाम श्री १०५ चन्द्र सागर रखा वहाँ से गुड़ावा नवादा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुंडलपुर पावापुर राजगीर यात्रा की वहाँ ब्रह्मचारी चक्रवर्ती ने क्षुल्लक दीच्छा ली नाम श्री १०५ सूर्य सागर रखा वहा से गया यात्रा करते हुए कोड़रमा चतुरमास किया वहाँ दीच्छा हुई ब्रह्मचारी राम गोपाल फिरोजाबाद वाले ने और चन्द्र सागर ने दीच्छा ली नाम श्री १०५ आदि सागर दुसरा नाम श्री १०५ शीतल सागर रखा।

गुरु श्री १०८ विमल सागर जी

श्री १०८ परम पूज्य कुन्थ सागर जी महाराज जी का जीवन चरित्र

आपका जन्म मध्य प्रदेश ग्वालियर राजधानी के ग्राम धावाँ में हुआ था। आपके पिताजी का नाम श्री छविराज जी एवं माताजी का नाम ढरको वाई था। आपका गोत्र ढिलवारी जैसवाल जैन है। आपके माता पिता वहुत ही धर्मात्मा प्रवृत्ति के थे तथा आपके ४ भ्राता और ४ भगिनी हैं। आपका गृहस्थ का नाम श्री वद्री प्रसाद था। आपका जन्म सम्वत् १९७२ में माह सुदी ५ को हुआ था। आपकी शादी २० साल की अवस्था में हुई थी। आपकी पत्नी का नाम ब्र० रतन बाई है। आपके ५ पुत्र और ४ पुत्री हुई थीं। आपकी धर्म-ध्यान में बड़ी रुची थी। आप लश्कर में दुकान करते थे। श्री आचार्य विमल सागर जी महाराज का लश्कर में पदार्पण हुआ। श्री महाराज जी को पति-पत्नी ने नवधा भक्ति से आचार्य जी को पड़गाया लेकिन आचार्य जी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ने नियम करवाया कि दो प्रतिमा ले लो। आपने स्वीकार कर प्रेम से आहार दान दिया। फिर श्री १०८ विमल सागर जी से धर्माध्ययन करते रहे। ७ प्रतिमा व १०५ क्षुल्लक दीक्षा का शुभ नाम श्री १०५ पद्म सागर जी था। इनकी इच्छा हुई कि मैं ईश्वरी में पंचकल्याण मेला में जाकर श्री सम्मेद शिखर की वन्दना करूँ। महाराज के आज्ञानुसार वहाँ से आये। प्रभु की वन्दना करने के पश्चात् शिखर पर भावना हुई कि मैं इस पवित्र क्षेत्र में आकर मुनि दीक्षा ग्रहण करूँ। मधुवन में तेरापंथी श्रेणि बड़े मन्दिर जी में मिती फाल्गुन सुदी १४ दिन बुधवार दिनांक २४--३--६६ विक्रमी सम्वत् २०२७ (वीर सम्वत् २४६६) में मुनि दीक्षा धारण करके श्री गुरु विमल सागर जी द्वारा श्री १०८ मुनि कुन्थ सागर नाम से सुशोभित हैं। अब श्री १०८ सुमित सागर जी के संघ में भागलपुर में चातुर्मास किया है। आप धन्य हैं कि इतने कुटुम्ब-परिवार को छोड़कर एक दिगम्बरी दीक्षा धारण की। कुटुम्ब-परिवार और समाज का नाम उज्जवल किया है। इस अवसर को धन्य है। धन्य है इनकी पवित्रात्मा को।

विशेषता है कि करीब ३५ साल विते। एक सर्प पैरों के उपर निकल गया कोई बाधा नहीं आई।

क्र० सं०.................
दिनांक.................
नरिया, (का. हि. वि.) वाराणसी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आद्य वक्तव्य

जैनधर्म वीतरागता का पाठ पढ़ाया है, अन्य धर्म सरागभाव का। तदनुसार जैनधर्म-विहित प्रत्येक क्रिया में कषाय, आरम्भ कम करने की प्रेरणा मिलती है किन्तु कुछ शताब्दियों से उसमें कुछ विकृती आगई है।

यह तो ठीक है कि मुसलमानी बादशाह के समय भट्टारकों ने विभिन्न स्थानों पर अपनी गद्दी स्थापित की थी। भट्टारकों ने उस विपत्ति के समय में जैन शास्त्रों की तथा जैन समाज की रक्षा की थी, जहाँ तहाँ जैन धर्म की प्रभावना भी की थी। वे यद्यपि मुनिपद से भ्रष्ट रूप धारक थे किन्तु वे अच्छे विद्वान् ब्रह्मचारी, मन्त्रवेत्ता होते थे अतः कुछ समय तक उन्होंने जैनधर्म की रक्षा अवश्य की।

किन्तु साथ ही कुछ धार्मिक क्रियाओं में उन्होंने शिथिलाचार भी मिला दिया। इसी के अनुसार वीतराग भगवान की पूजा में उन्होंने बहुत आरम्भ जनक बातों का समावेश कर दिया।

अभिषेक में दूध दही आदि द्वारा पंचामृत-अभिषेक का विधान मिला दिया। आर्ष पद्धति शुद्ध जल से अभिषेक करने की थी, उसको विकृत करके भट्टारकों ने दूध, घी, दही आदि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पदार्थों से विधान करके अधिक आरम्भ बढ़ा दिया। महावीर जी के भूतपूर्व स्वर्गीय भट्टारक महेन्द्रभूषण जी इत्र से भी अभिषेक कराते थे। स्त्रियों द्वारा भगवान का अभिषेक, प्रतिमा जी पर केशर पुष्प चढ़ाना, दुग्ध में प्रतिमा जी को उतारना, रात्रि में पूजन करना, मुनियों के पास स्त्रियें रहना तथा बालों का भगवान पर चमर ढोरना, वैष्णवों की तरह भगवान की आरती करना, होम करना, भगवान के माथे पर मुकुट लगाना, गले में हार का पहिराना कहाँ तक कहा जावे इतनी विपरीत रीति इन भट्टारकों ने चलाई जो जैनधर्म से बिलकुल प्रतिकूल है मुनियों को एक गाम में ५ दिन से ज्यादा रहने का विधान जरूरत बिना नहीं परन्तु आजकल के मुनि लोग छः मास बारह मास चतुर्मास किये पश्चात ठहरे ही रहते हैं, कहाँ तक लिखें ये सब बातें जैनधर्म से प्रतिकूल हैं। ये जैनधर्म निवृत्तिमार्ग का उत्तम स्थान है जिसे प्रवृति मार्गी बना दिया। धन्य है आज कल के त्यागी व्रतियों को, तब ही तो अन्य धर्मी इस जैनधर्म की आज हँसी उड़ाते हैं।

इनही आर्ष विरोधी बातों को सहन न करके कई शताब्दि पूर्व दिगम्बर जैन विद्वानों ने आर्ष पद्धति की रक्षा के के लिये भट्टारकों का विरोध करके तेरह पंथ की स्थापना की और प्रासुक फल फूल नैवेद्य दीप से पूजन करने का तथा जल से ही अभिषेक करने का प्राचीन विधान चालू किया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तदनुसार उत्तर प्रान्त में अब तक वैसा ही पूजन प्रक्षाल होता रहा किन्तु कुछ समय से कुछ लोगों ने फिर उसी भट्टार की प्रथा को चालू करने का प्रयत्न चालू कर दिया है और कुछ स्थानों पर पंचामृत अभिषेक होने लगा है।

इन भट्टारकी प्रथा का निराकरण करने और आर्ष पद्धति चलाने के अभिप्राय से श्री १०८ पूज्य आचार्य सूर्यसागर जी महाराज ने यह पुस्तक लिखी है।

इस पुस्तक में अनेकों शास्त्रों के प्रमाण देकर यह सिद्ध किया गया है कि पंचामृत अभिषेक विधान काष्ठा संघी आचार्यों द्वारा चलाया गया है, यह शास्त्र विहित नहीं है। स्त्री को प्रक्षाल करने का अधिकार नहीं हैं, स्त्री तो सिर्फ पूजन कर सकती है। एवं इसमें यह भी सिद्ध किया गया है कि पूजन खड़े होकर ही करना चाहिये, बैठकर नहीं। भगवान की आरती करने का भी विधान आर्ष मार्ग नहीं है। इस पुस्तक में जिन बातों का निषेध किया गया है या जिनकी पुष्टि की गई है सब के शास्त्रों के प्रमाण दिये हैं। फूल चढ़ाने के सम्बन्ध में तो उमा स्वामी श्रावकाचार में यहाँ तक लिखा है कि यदि उसकी एक कली भी टूट जाय तो यति हत्या के समान पाप लगता है। इसलिये ऐसी पाप जनक प्रवृत्तियों का सर्वथा परित्याग कर शास्त्र विहीत मार्ग का अवलंबन करना ही श्रेयस्कर है। वर्तमान में इन शास्त्र विरुद्ध प्रवृत्तियों को रोकने की बड़ी आवश्यकता है। पूज्य आचार्य श्री ने विविध प्रमाणों सहित यह पुस्तक लिखकर जनता का महान हित किया है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाठक महानुभाव इसको आदि से अन्त तक पढ़कर धार्मिक लाभ उठावें। और अपने यहाँ पर उसी प्राचीन आर्ष पद्धति को चालू रहने दें, उसमें विकार न आने देवें। यह पुस्तक प्रत्येक श्रावक के लिये उपयोगी है।

पं० गोविन्दराम शास्त्री
कोडरमा झुमरी तिलैया निवासी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

जन्मदिवस शुभमिती आसोज सुदी ६ वि० सं० १६७५
ग्राम श्यामपुरा परगना अम्बाह (जिला मुरैना)
ऐलक दीक्षा

आर्ष मार्ग मार्तण्ड

मंगलाचरण

निर्दोषं परमात्मसौख्यविषयं बुद्धं चिदानन्दकम् ।
नत्वा स्वात्मसुखानुभूतिहृकुरं वक्ष्ये सुशास्त्रान्वितम् ॥

अर्थ—जिस आत्मा ने समस्त घातिया और अघातिया कर्मों का नाश कर दिया है वस आत्मा निर्दोष है और वह परमात्मसुख का भोक्ता है। एवं लोक अलोक के त्रिकालवर्ती सम्पूर्ण द्रव्य गुण पर्यायों को एक ही समय में दृष्टिगोचर कर लिया है और कैसा है वह आत्मा चिदानंदरूप है। ऐसे परमात्मा जो सिद्ध भगवान हैं, उनका नमस्कार करके अपने आत्मा में जो कषाय प्रगट रहती हैं उसको शमन करने के लिये या उसको निर्मूल करने के लिये आदर्श (दर्पण) के समान ऐसे आर्षमार्ग मार्तण्ड नामक ग्रन्थ को आचार्यों की परम्परा के कथनानुसार

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रचता हूँ। यह ग्रन्थ स्व और पर जीवों के सुख और कल्याण का करने वाला होगा।

प्रश्न—इस ग्रन्थ में किस प्रकार का कथन होगा ?

उत्तर—इस ग्रन्थ में परम्परा से दिगम्बर धर्म का आदर्श जो निवृंती मार्ग है उसी की यहां पर व्याख्या होगी उस व्याख्या में—

१ भगवान पर जल से अभिषेक हो या पंचामृताभिषेक ?
२ स्त्री भगवान का अभिषेक कर सकती है या नहीं ?
३ स्त्री मुनिराज के शरीर का स्पर्श कर सकती है या नहीं ?
४ भगवान की प्रतिमाजी के ऊपर केशर पुष्प चढ़ाना चाहिये या नहीं ?

इस प्रकार संक्षेप में आर्षशास्त्रो के अनुसार इसमें कथन किया जावेगा।

हुंडावसर्पिणी काल का प्रभाव

एक कल्पकाल २० वीस कोड़ा कोड़ी सागर का होता है। एक उत्सर्पिणी दूसरा अवसर्पिणी के नाम से हमेशा (अनादि काल से) अनर्गल रूप से सदा चलता ही रहता है। इसमें किन्हीं आचार्यों का ऐसा मत है कि १४८ चौवीसी तीर्थंकरों की निकलने के बाद एक हुन्डावसर्पिणी काल आता है। तो दूसरे आचार्य ऐसा कहते हैं कि असंख्यात चौवीसी बीतने पर हुण्डासर्पिणी काल आता है। उसमें ही ऐसी वृत्ति हुआ करती है जो जैन धर्म में शिथिला चारी का प्रदर्शन करती है। जैसे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१—तीर्थंकर देव चतुर्थ काल में ही पैदा होते है और उस ही में मोक्ष जाते हैं। इस हुन्डावसर्पिणी काल में भगवान आदिनाथ (ऋषभदेव) तीसरे ही काल में पैदा होकर तीसरे ही में मोक्ष गये।

२—तीर्थंकरों की पुत्री नहीं होती। परन्तु आदिनाथ स्वामी के ब्राह्मी और सुन्दरी दो पुत्री पैदा हुईं सो सबसे प्रथम आर्यिकाओं की मुख्य गणनी हुईं और १ वस्त्र रखा, दूसरा नहीं।

३—चक्रवर्ती का मान भंग हुआ।

४—तीर्थंकरों का भी मान भंग हुआ जब कि वृषभाचल पर्वत पर शान्तिनाथ कुँथुनाथ व अरहनाथ चक्रवर्ती होकर नाम लिखने गये।

५—तीर्थंकरों का अपवाद नहीं होता किन्तु भगवान आदिनाथ स्वामी का तो मारीचकुमार ने और भगवान महावीर स्वामी का श्वेताम्बर भाइयों ने अपवाद किया। जैन ब्राह्मणी के घर जन्म लेकर क्षत्राणी माता त्रिशला के गर्भ में रखे गये, गोशलिया के निमित्त से भगवान को पेचिश की बिमारी हुई। आदिनाथ स्वामी ने एक भोगभूमिया की स्त्री से विवाह किया।

इस जैनधर्म में आर्षमार्ग से गिरने का समय आया जिसका उल्लेख नीतिसार नामक ग्रन्थ में आचार्य इन्द्रनन्दी महाराज ने इस प्रकार किया है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जब जैनधर्म नामा प्रधान धर्म में भी उच्छृंखलता फैली तब ऋषि अर्हद्बलि नाम के दि० गुरु ने इस प्रकार अपना कार्य प्रारम्भ किया।

संघ निर्माण

तदैव यतिराजोऽपि, सर्वनैमित्तिकाग्रणी।
अर्हद्बलिगुरुश्चक्रे संघसंघट्टनपरम् ॥६॥
सिंहसंघो नन्दिसंघः, सेनसंघो महाप्रभः।
देवसंघ इतिस्पष्टं, स्थानस्थितिविशेषतः ॥७॥

अर्थ—भगवान अर्हद्बलि आचार्य ने जब यतिराजों में उच्छृंखलता बढ़ती देखी तब सर्व मुनियों को एकत्रित किया। सब मुनि एकत्रित हुए तब उनका नामकरण इस प्रकार से हुआ (१) सिंहसंघ, (२) नन्दीसंघ, (३) सेनसंघ और (४) देवसंघ।

इन चारों प्रकार के संघ में किसी प्रकार का भेद भाव नहीं रहा। इनके नाम चार और शाखा दो हुईं। (१) बलात्कारगण (२) सरस्वतिगच्छ। इनकी दीक्षा, शिक्षा, स्वरूप, प्रवृति, आचरण, प्रायश्चित्त, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान ? में किसी प्रकार फर्क नहीं, किसी प्रकार का भेद भाव नहीं। इस प्रकार की सर्व साधु समाज में घोषणा कर दी गई।

थोड़े दिनों बाद हुंडावसर्पिणी के माहात्म्य से फिर समाज में शिथिलाचारी का दौर आया तब क्या क्या व्यवस्था हुई सो यहां दिखाते हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कियत्यपि ततोऽतीते काले श्वेताम्बरोऽभवत् ।
द्राविड़ो यापनीयश्च, काष्ठासंघश्चमानतः ॥६॥

अर्थ—भगवान महावीर स्वामी के मोक्ष पधारने के पश्चात इस पवित्र आत्म (जैन शुद्ध मार्ग) धर्म में से अहंभाव के कारण (१) श्वेताम्बर (अर्धफालक) (२) द्राविड़ (३) यापनीय (४) काष्ठा-संघ इस प्रकार चार संघ निकले।

नोट—ये संघ कब और कैसे निकले इनका खुलासा दर्शनसार तथा भद्रबाहु चरित्र के अनुकूल है।

श्वेताम्बर मत की उत्पत्ति

छत्तीसे वरिससए विक्कमरायस्स मरणपत्तस्स ।
सोरट्ठे वलहीए उप्पण्णो सेवड़ो संघो ॥११॥

अर्थ—विक्रमादित्य राजा की मृत्यु के १३६ वर्ष बाद सौराष्ट्र देश के बल्लभीपुर में अर्धफालक मत से श्वेताम्बर संघ उत्पन्न हुआ।

१—गुजरात के पूर्व में भागा नगर के निकट यह प्राचीन शहर बसा हुआ था। बहुत समृद्धशाली था। ई० सन् ६४० में चीनी यात्री हुएनसांगने इसका कथन किया है। वहां तक यह पूर्ण आबाद था। काठियावाड़ का जहां वलानामक ग्राम है, कोई कहते हैं कि वहां पर ये नगर बसा हुआ था। और श्वेताम्बर जितने भी पुरातन श्रुत है सो यहीं पर रचनात्मक हुए हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१—इसका विशेष विवरण देखना हो तो भद्रबाहुचरित्र ग्रन्थ में देखें

२—इसके पीछे विपरीत मत की उत्पत्ति हुई।

३—इसके पीछे वैनयिकों के मत की उत्पत्ति हुई।

४—इसके बाद अज्ञान मत की उत्पत्ति हुई।

५—इसके बाद विक्रमादित्य राजा की मृत्यु के ५२५ वर्षपश्चात द्राविड़ संघ की उत्पत्ति हुई ?

६—विक्रमराज की मृत्यु के ७०५ वर्ष पश्चात यापनीय संघ की उत्पत्ति हुई।

७—काष्टा संघ की उत्पत्ति का उल्लेख।

सिरि वीरसेण सीसो जिणसेणो सयलसत्थ विएणाणी।
सिरिय उमनंदि पच्छा चउसंघसमुद्धरणधीरो ॥ ३० ॥

अर्थ——श्री वीरसेन स्वामी का शिष्य जिनसेन तथा और भी कई मुनिराज इस ही प्रकार इस परम्परा में होते-होते अन्तमें विनय सेन मुनि हुए। इनके द्वारा दीक्षित कुमार सेन मुनि हुए। इन्होंने समाधि से भ्रष्ट होकर फिर प्रायश्चित न लेकर अपना एक मत दूसरा ही प्रतिपादन किया। जिसमें ऐसा मार्ग प्रदर्शन किया—

मयूर पिच्छी की जरूरत नहीं है। गौके वालों की पिच्छी रक्खो और छट्ठा रात्रि भोजन नामा अणुव्रत करो।

यहां से ही इसके द्वारा ये काष्ठा संघ का संस्कार प्ररूपण होकर विस्तार को प्राप्त होकर वृक्ष रूप में परिणित हुआ। जिसका कथानक इस प्रकार है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पंचामृताभिषेक की कथा

इसका विशेष कथन तो भद्रबाहु चरित्र से समझना। यहां तो सामान्य कथन करते हैं, क्योंकि पुस्तक छोटी है। विक्रम संवत् ७५३ में काष्टासंघ की उत्पत्ति हुई। भगवान कुन्द-कुन्द स्वामी के पीछे इस संघ में कई बड़े शक्तिशाली मुनिराज हुए और इन्होंने ही सिंहसंघ, सेनासंघ, नन्दीसंघ व देवसंघ यानि इन चारों संघों को भाव पूर्वक अच्छी तरह से चलाया। अन्त में मुनिराज वीरसेन और इनके शिष्य जिनसेन स्वामी हुए। पश्चात् मुनिराज विनयसेन जी हुऐ। इनके दो शिष्य एक का नाम गुणभद्र जी को छोड़कर कुमारसेन जी ने रोकते समाधि धारण करली। परिणाम यह हुआ कि मृत्यु तो न हुई किन्तु समाधि से भ्रष्ट हो गये। आप बड़े विद्वान और शास्त्रों के ज्ञाता थे, साथ ही हठग्राही भी थे। गुरु की नहीं मानी न प्रायश्चित्त लिया। उन्मत्ता की तरह ज्ञान का घमन्ड रहा। लोगों के समझाने से गुरु जी के पास आकर प्रायश्चित लेने को तैयार हुऐ। तब गुरु जी ने (आचार्य-जी ने) इनको प्रायश्चित दिया कि तुम्हारा देशभद्र प्रायश्चित है, तुम देश छोड़ कर ऐसी जगह (स्थान) पर रहो जहाँ पर कोई जैन न हो वहां पर चारित्र निर्वाह करो। तब यह वहाँ पर पहुँचे जहां जैनियों का नाम निशान भी नहीं था। वहां पर इन्होंने जनता को उपदेश दिया। उपदेश सुनकर लोग प्रभावित होकर जैन बने। जैनधर्म का सबसे पहिला उसुल देव पूजन का है। देव पूजन का उपदेश सुनकर लोग घबराये क्योंकि वहां पर मन्दिर नहीं था।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परन्तु यह महाराज बड़े चतुर और बुद्धिमान थे। तब तुरन्त ही खाती (बढ़ई, सुनार) बुलाकर पुरुषाकार काष्ठ की १ एक मूर्ति बनवाकर सूर्य मन्त्र देकर एक स्थान पर विराजमान करदी और श्रावकका जो धर्म था, (जिनपूजामुनिदानम्) सो प्रारंभ कर दिया। परन्तु काष्ठ के स्वभाव अनुसार जल के संबन्ध से वो प्रतिमा फटने लगी। तब श्रावक लोगों ने आकर विनय सहित प्रार्थना की। स्वामिन् प्रतिमा जी फटने लग गई। तब महाराज श्री बोले कि जब तक पाषाण की प्रतिमाजी तैयार न हो तब तक इस प्रतिमा जी के ऊपर दुग्ध, दही, घी, शक्कर वगैरह का अभिषेक करो सो सचिक्कणपणाते ये प्रतिमा जी फटेगी नहीं और न अविनय होगी। जब पाषाण की प्रतिमा जी तैयार हो जावेगी तब यह कार्य बन्द कर देंगे। यद्यपि पाषाण की प्रतिमा जी तैयार कराकर प्रतिष्ठित कर विराजमान भी करादी गई परन्तु जो रीति चालु हुई थी वह बन्द कर देने पर भी बन्द न हुई, तब से ही जैनियों में दुग्ध, दही, शक्कर, घी, इक्षुरस यानी पंचामृत अभिषेक चालु हुआ। हमारे यहां तो जब तीर्थंकरका जन्म होता है तब बाल्य अवस्था में अभिषेक होता है। वह जल से ही होता है।

यद्यपि इन्द्र अव्रती है फिर भी वह भगवान का जन्मते ही क्षीरसागर के जल से ही अभिषेक करता है नकि पंचामृत से। इसके बाद भगवान मुनि हो जाते हैं, तब २८ मूलगुणों में स्नान त्याग मूल गुण है ही, मुनि अवस्था में त्रिकाल में भी अभिषेक नहीं होता। फिर भगवान श्रेणी आरोहण कर मोह नाश करके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

केवली हुए और समोशरण में विराजमान रहे तब भी अभिषेक न हुआ और न इन्द्रों ने किया।

प्रश्न—तो अभिषेक की प्रथा कैसे चालु हुई सो बतलाइये ?

उत्तर—विचारो तो सही कि भगवान् तो साक्षात चेतन पदार्थ हैं और जिनका अभिषेक समोशरण में भी नहीं हुआ। किंतु यह प्रतिमाजी जो पाषाण व धातु की है, इसका अभिषेक करना आवश्यक है क्योंकि अभिषेक के द्वारा भगवान की प्रतिमाजी साफ और सुथरी बनी रहेगी एवं वीतरागता बनी रहेगी, जिससे आत्मा अपनी आत्मा का अनुभव करके आत्म कल्याण कर सकती है। यही अभिषेक करने का अभिप्राय है।

महाराज श्री ने यह भी कहा घबराओ नहीं। 'आपत्ति काले मर्यादा नास्ति' की निति का आश्रय लेकर आप और हम प्रबन्ध तो करते ही हैं जिससे कि जल्दी से जल्दी श्री मन्दिरजी तैयार हो जावे और पाषाण की प्रतिमा जी तैयार कराकर प्रतिष्ठा करके विराजमान करा देंगे, तब इस प्रकार के अभिषेक को बंद करके पुरातन शुद्ध जल का अभिषेक ही करते रहेंगे जिससे हिंसा भी नहीं होगी।

थोड़े दिन के उपरांत श्री मन्दिर जी तैयार होकर प्रतिमाजी भी तैयार हो गई, प्रतिष्ठा महोत्सव करके मन्दिर में प्रतिमाजी विराजमान कराई गई। अब जलाभिषेक करने के लिये महाराज श्री से निवेदन किया। स्वामिन् अब जो पांच प्रकार का अभिषेक प्रतिमाजी की रक्षार्थ होता था वह बन्द कर दिया जावे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महाराजश्री की आज्ञा हुई ठीक है, बन्द कर दिया जाय परन्तु चालू हुई रीति इस कलिकाल में बन्द होना महान दुर्लभ है। सो कोई तो जलाभिषेक करने लगे और कोई वैसे ही पाँच प्रकार के पदार्थों को लाकर अभिषेक करने लगे। महाराज के समझाने से भी वह प्रथा नहीं रुकी।

महाराज श्री की अध्यक्षता में जो साधु थे वो उस मर्यादा के विशेष रूप से पालक हो गये, अब वह प्रथा कैसे रुक सकती है ?

इस प्रकार ये पंचामृत अभिषेक का कथन सामान्य रूप से प्ररूपण किया। विशेष समझना हो तो भद्रबाहुचरित्र आदि अनेक ग्रन्थ हैं तथा और भी कई प्रकार की पुस्तकें छपकर वितरित हो चुकी हैं उनसे समझ लेना चाहिये।

इसके उपरान्त इस पंचामृत अभिषेक की पुष्टि करने के लिये ही कई ग्रन्थ बनाये गये। जिनमें बड़े-बड़े आचार्यों के नाम लिख लिख कर ग्रन्थ चालु कर दिये। वह ग्रन्थ जैपुर से श्रीमान सेठ बनजीलाल जी जवेरी की ग्रन्थमाला से प्रकाशित हो चुका है।

भट्टारक पद

इस पंचामृताभिषेक की पुष्टि करने के लिये बड़े-बड़े मुनिराज कपड़े पहिन कर भट्टारक हो गये। इसी प्रकार पंचामृताभिषेक की पुष्टि करने के लिये हमारे यहां देहली में स्वामी प्रभाचन्द्रजी मुनिराज आदि साधु बादशाह के प्रार्थना करने से कपड़े पहिन कर भट्टारक बने। ये बादशाह इनकी विद्या का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चमत्कार देख कर मुग्ध हो चुके थे। यह बड़े जबर्दस्त मंत्रवादी तथा जन्त्र-तन्त्र वादी थे। जैन धर्म की इन लोगों ने अपूर्व सेवा की। किन्तु थोड़े वर्षों बाद भट्टारक लोग विषयों के लोलुपी और जैनियों पर पूर्ण रूप से अत्याचार करने लग गये। जिससे जैनी लोग घबरा कर इनकी गादी पर बैठने के लिये अपना बालक भी देने से इनकार करने लगे। तब यह लोग ब्राह्मणों से लड़के मोल लेकर भट्टारक बनाने लगे। उन ब्राह्मणों भट्टारकों ने हमारे यहां के ग्रन्थों में अपनी मरजी के अनुसार श्लोक बना बना कर पुरातन ग्रन्थों में भर दिये और नये भी कई महान् आचार्यों के नाम से ग्रन्थ बना बना कर चालु कर दिये। किसकी सामर्थ जो ऐसे बलवान मंत्रवादी शक्तिशालियों के सामने बोले। जो बोले उसकी शामत आई। उसे शीघ्र ही खम्बे से बंधवा कर हंटरों से चमड़ा उड़वा दिया जाता था। इतना ही नहीं उनसे टैक्स लेना भी जारी कर दिया था यदि यह कथा देखनी हो तो भट्टारक मीमांसा नामक पुस्तक पढ़ें, उससे सब मालूम हो जावेगा।

प्रश्न—पंचामृत अभिषेक इन भट्टारक लोगों ने ही चालु किया या पहिले से ही था? प्रतिमा जी पर केशर लगाना व पुष्प चढ़ाना, सूरे गाय के बालों का भगवान पर चमर ढोरना, पद्मावती देवीके ऊपर भगवान पार्श्वनाथ विराजमान कर पुजवाना या पूजना, भगवान के शिर पर मुकट पहिराना, गले में माला पहिनाना, उस दिन को मुकट सप्तमी कहना, भाद्रपद सुदी १२ के दिन भगवान को दूध में रात भर डुबो कर एक तपेले में रखना, व्रतों में भंडार

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देना, इतवार का व्रत करना, मन्दिर जी में क्षेत्रपाल विराजमान करना. भगवान से पहिले उसे पूजना, हवन करना, रात्रि में पूजन करना। रात्रि ही में प्रक्षाल कर लेना, क्वार वदी १ के दिन थालोड़ी चढ़ाना, भगवान् के सामने पूजन का द्रव्य मंडलजी पर चढ़ाना, पूजन पूरी हो तब तक वहां ही रखना, आदि की प्रथा कैसे चली? किस २ बात का वर्णन करें, भगवान् जाने कैसी २ रीति रिवाज कायम किये। देखिये हमें तो इसका कथन पहिले से होता आया है ऐसा जचता है क्योंकि इसका कथन तो कषाय पाहुड़ (जय धवल ग्रन्थ) के १०० वें पृष्ठ पर भी लिखा मिलता है सो कैसे है?

उत्तर—इसकी कथा बड़ी गहरी है। देखो यह रीति रिवाज दूसरे स्वामी भद्रबाहु के समय यानि राजा चन्द्रगुप्त नंद वंशी के समय राजा विक्रम की मृत्यु के १३६ वर्ष पश्चात से अर्ध फालक यानि श्वेताम्बर सम्प्रदाय हमारे यहां से अलग हुए। तब से ही ऐसे विपरीत कार्य चालू हुए। पहिले कुछ नहीं था। जिनेन्द्र भगवान का उपदेश तो निवृत्ति मार्ग का था। वह प्रवृति मार्ग (हिंसा) जनक कैसे हो सकता है? हाय कलिंग काल! तुझे धन्य है, जो पानी में भी आग लगा कर संतोष पहुंचाना चाहता है; किन्तु यह हो नहीं सकता।

इस पंचामृत अभिषेक को करने के पश्चात् उसको जिस जमीन पर डालते हैं, वहां की व्यवस्था जब आप देखेंगे तो आपकी आत्मा थर्रा जावेगी क्योंकि उस पंचामृताभिषेक में

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घी-दुग्ध दही मीठा रस (शकर) पड़ता है उसके निमित्त से हजारों चींटा चींटी आ जाती हैं और फिर उन चींटा चींटियों को वहां पर बड़े जीनावर जो चिड़ियां कागले बुगले चोंचों से उठा उठा कर खा जाते हैं। तो विचारो यह पाप हुआ या पुण्य ? इसके वारे में आचार्य श्री प्रभाचन्दजी ने सिंदुर प्रकरण में इस प्रकार बतलाया है।

मालिनी छंद

कमल वनमग्ने वासरं भांस्वदस्ता,
दमृतमुरगवक्रात्साधुवादं विवादात् ।
रुगपगभमजीर्णाज्जीवितकालकूटा—
दभिलषति वधाद्यः प्राणिनां धर्ममिच्छेत् ॥ २७ ॥

घनाक्षरी छन्द

अग्नि मैं जैसे अरविंद न विलोकियत,
सूर अथवत जैसे वासर न मानिए ।
सांप के बदन जैसे अमृत न उपजत,
काल कूट खाए जैसे जीवन न जानिए ।
कलह करत नहिं पाइए सुयश जैसे,
वाढ़त रसास रोगनाश न बखानिए ।
प्राणिवध माँहि तैसे धर्म की निशानी नाहिं,
याही ते बनारसी विवेक मन आनिए ॥ २७ ॥

अर्थ—जो पुरुष प्राणियों के घात करने से धर्म की इच्छा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

करते हैं, वे पुरुष अग्नि से कमल के वन को उत्पन्न होने की व सर्प के मुख से अमृत की और विवाद से अच्छे और यशस्वी वचनों की, अजीरण अर्थात् अपच्च भोजन से रोग दूर होने की और विष खाने से जीवित रहने की अभिलाषा करते हैं।

शिखरिणीछन्द

यदि ग्रावातोये तरति तरणिर्यद्य दयते,
प्रतीच्यांसप्तार्चिर्यदि भजति शैत्यं कथमपि।
यदि क्ष्मापीठस्यादुपरिसकलस्यापि जगतः
प्रसूते सत्वानां तदपि न वधः क्वापि सुकृतम्। २६।

अभानक छन्द

पच्छिम रवि उगै, तिरै पाषाण जल,
जो उलटै भुविलोक, होय शीतल अनल।
मेरू डिगमगै, सिद्ध के होय मल,
तबहूँ हिंसा करत, न उपजत पुण्यफल॥ २६॥

अर्थ—यदि जल में पाषाण तिर जावे और सूर्य पच्छिम में हो जावे, अग्नि किसी तरह शीतल हो जाय, पृथ्वीतल त जगत के भी ऊपर हो जाय (अर्थात् पृथ्वी लौट जाय) प्राणियों का बध करना किसी भी दशा में पुण्य उत्पन्न कर सकता।

संसार में गृहस्थों के लिए एक दया ही प्रधान धर्म है।

क्रीड़ा भूः सुकृतस्य दुष्कृतरजः संहारवात्याभवो—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दिग्वह्नोव्यंसनाग्निमंघपटलीसंकेतदूतीश्रियाम ।
निःश्रेणिस्त्रिदिवौकसः प्रियसखीमुक्तेः कुगत्यागुर
सत्त्वेषु क्रियतां कृपैव भवतु क्लेशैरशेषैः परैः । २५ ।

घनाक्षरी छन्द

सुकृत की खान इन्द्रपुरी की नसैनी जान—
पापरज खंडन को पौन राशी पेखिए ।।
भव दुःखपावक बुझाइवे को मेघमाला—
कमला मिलाइवे को दूती ज्यों विशेखिए ।
सुगति वधुसों प्रीतिपालवै को आलीसम,
कुगतिके द्वार दृढ़ आगल सी देखिए ।।
ऐसी दया कि जो चेत तिहूँलोक प्राणिहेत ।
और करतूत काहू लेख में न लेखिये ।। २५ ।।

अर्थ—जो पुण्य के क्रीड़ा करने का स्थान है, पापरूपी धूल को ऊड़ाने के लिये जोरदार हवा है, संसार रूपी समुद्र से तिरने के लिये नौका है, व्यसन रूपी अग्नि को बुझाने के लिये मेघमाला है, सम्पदारूपी स्त्रियों से मिलाप कराने वाली संकेत दूती है, स्वर्ग के चढ़ने के लिये नसैनी है, मुक्ति की त्यारी सखी है और नरकादिक दुर्गतियों के रोकने के वास्ते अर्गल है, प्राणियों पर ऐसी एक दया ही करनी चाहिये और सारे क्लेशों से क्या होता है। भाव यह है कि ग्रहस्थों के लिये दया ही सब धर्मों में प्रधान धर्म विना दया के अन्य व्रतादिक क्लेशमात्र ही हैं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हमें तो आजतक ये ही श्रद्धान था कि पंचामृत अभिषेक ही आदर्श मार्ग होगा। परन्तु इन ऊपर के सिद्धान्त लेखों से यह निश्चय (नियमकर) कर ज्ञात हो गया कि जहाँ पर रागद्वेष की पुष्टि से जो भी धर्म की आड़ लेकर कार्य किया जावे और जिसमें हिंसा की पुष्टि होवे ऐसे कार्य करना तीव्र मिथ्यात्व क्रिया है। उससे आत्मा मिथ्यादृष्टि बन कर संसार का पात्र बन जाता है और फिर नरक, निगोद में अनन्त काल तक दुःख उठाता है। यातें ऐसा कार्य करना जैन सिद्धान्त से बिलकुल विरुद्ध है ऐसा हमें पूरी तरह निश्चय हो गया कि पंचामृत अभिषेक करना वज्र मिथ्यात्व है।

हे भव्य जीवो खयाल करो ऐसे-ऐसे ग्रन्थ आचार्यों ने गुरुपरम्परा से लिखे हैं उनमें भगवान गृहस्थ थे और अभिषेक करने वाले देव भी अव्रती थे, तब भी अभिषेक क्षीर समुद्र के जल से ही किया न कि पंचामृत से।

विचार कीजिये जो लोग पंचामृत अभिषेक करते हैं फिर भी उन्हें उस पंचामृत की शुद्धि करने के लिये जलाभिषेक करना ही पड़ता है। क्योंकि जलाभिषेक के विना प्रतिमाजी शुद्ध नहीं होती, ऐसा पूर्ण रीति से रिवाज है। जल से ही हिंसा बचती है और पंचामृत से हिंसा हुआ ही करती है, वह हरगिज टलती नहीं। इसलिये देवेन्द्रों ने जल अभिषेक ही शुद्ध समझा है। क्योंकि वे अवधिज्ञानी थे, मनुष्य तो छद्मस्थी हैं। इसलिये

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
राग द्वेष में फंसकर पक्ष पकड़ली और खोटी रिवाज पकड़ कर बैठ गये। सोही जैनधर्म के ह्रास का कारण बन कर जीवों को पाप बन्ध कराता है।

प्रश्न—पंचामृत अभिषेक करने के बारे में बड़े २ ग्रन्थों में बड़े २ आचार्यों का नामोल्लेख है फिर उनका कहना असत्य कैसे समझा जाय ?

उत्तर—ऐसी शंका करना बहुत ही ठीक है, सुनिये। हमारी इस दिगम्बर जैन समाज में भगवान का अभिषेक जन्म कल्याणक के समय में ही माना है, सोभी तीर्थंकर प्रकृति वालों का। और वह भी सौधर्म और ऐशान इन्द्र के द्वारा न कि इन्द्राणी के द्वारा। इन्द्राणी स्त्री है अतः भगवान का अभिषेक नहीं कर सकती, ऐसा नियम है।

प्रश्न—यदि यह कथन ठीक मान लिया जाय परन्तु इन्द्राणी ने भगवान के शरीर को कपड़े से पूंछा और कपड़े पहिना कर आभूषण पहिनाये; फिर अभिषेक की अधिकारणी क्यों नहीं ?

उत्तर—यह कहना ठीक है। एक प्रकृति का नियम हुआ करता है। उसमें स्त्री अभिषेक करने की अधिकारिणी नहीं। अगर अधिकारणी होती तो जरूर अभिषेक करती। वस्तु स्वरूप में शंका नहीं हुआ करती, आगम की आज्ञा तो माननी ही पड़ती है। जब भगवान का राज्याभिषेक हुआ तब भी इन्द्रदेव लोग

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्षीरसागर का जल लाये और मनुष्यों ने ही अभिषेक किया स्त्रियों ने नहीं।

देखो पंचामृताभिषेक पाठ (प्रकाशक पूरणमल जी काला मंत्री श्री चन्द्रसागर दिगम्बर जैन युवक संघ कुचामन सिटी फाल्गुन शुक्ला पूनम प्रथमावृति २००० ता० १५ मार्च १६५१ वाली पुस्तक) इसके पृष्ठ ६३ में लिखा है कि

कितनी ही रानियां सम्राट को अभिषेक के लिये सामग्री उठा कर देती हैं। कोई २ आरती उतारती हैं। कोई २ जय जय कार शब्दकर रहीं हैं। वे स्त्रियां बड़े घड़ों को उठाकर राजा को सौंपती हैं। बहुत बड़े घड़े हो तो कई मिलकर उठाती हैं। सम्राट विचारते हैं कि इन्हें कुँभों को उठाने में बड़ा कष्ट होता है, उसी समय वे अनेक रूप बनाकर उन स्त्रियों के बीच में खड़े होकर उनको उठाने में मदद करते हैं। कभी २ अपने आप अनेक रूपों से उठाते हुए उन स्त्रियों से कहते हैं कि आप लोग अभिषेक देखती हुई खड़ी रहें; मैं सब करता हूँ। ऐसा कह स्वयं अभिषेक करते हैं।

इस पर पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि यदि स्त्रियों को अभिषेक करने का अधिकार होता तो सम्राट ने खुद जैसे अभिषेक किया और स्त्रियों से घड़े उठवाये उसी तरह से उनसे अभिषेक भी कराता किन्तु ऐसा न कर उन्हें खड़ा रहने के लिये आदेश दिया है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खयाल कीजिये इस पुस्तक में लेखक ने बिलकुल ठीक ठीक लिखा है कि यदि स्त्रियें अभिषेक की अधिकारिणी होती तो सम्राट जरूर अभिषेक कराते। पुस्तक लेखक भी पाप से डरता है; इसीलिये कहीं न कहीं तो पक्ष में भी ठीक बात लिख ही दी है। धन्यवाद है इस पुस्तक लेखक को जिसने यथार्थ वात दर्शाई।

लोग कहते हैं कि मैंनासुन्दरी ने तो प्रक्षाल किया होगा उसके लिए शास्त्रों में ऐसा लिखा है। वीसपंथ आम्नाय के मनोमती खण्डन नामक ग्रन्थ के ३४ वें पन्ने में ओली नम्बर २२ में श्री पाल चरित्र ग्रन्थ का लेख है। ये पुस्तक सं० १९४३ के साल की छपी हुई, हमारे पास मौजूद है। बम्बई के श्रीधर सिवनलाल जी के ज्ञानसागर छापाखाने में पं० मन्नालाल जी मानपुर वालों द्वारा आश्विन शुक्ल १० रविवार ता० १७ अक्टूबर सन् १८८५ में प्रकाशित की गई है।

तत्रनंदीश्वराष्टम्यां सिद्धचक्रस्य पूजनं ।
चक्रेसा विधिना दिव्यै जलैर्कपूरचन्दनैः ॥

अर्थ—वहुरि मैंनासुन्दरी ने अष्टान्हिका की पूजा विषैसिद्धचक्र की पूजा का स्पर्शित गंध और पुष्प तथा गंधोंदक श्रीपाल कोटीभट के शरीर में लगाया और सात सौ सुभट के सींचा तातैं कुष्ठव्याधि गई। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिये कि प्रतिमाजी का मैंनासुन्दरी नें स्पर्श नहीं किया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—स्त्री को भगवान की पूजन करने का अधिकार है या नहीं ?

उत्तर—स्त्री को भगवान की पूजा करने का अधिकार है। हमारे आचार्यों ने पूजन के छः भेद माने हैं।

(१) स्नपन (प्रक्षाल) (२) आव्हानन (बुलाना) (३) स्थापन (ठहराना) (४) सन्निधीकरण (मेरे पास में ठहरें) (५) पूजन करना (द्रव्य चढ़ाना) (६) विसर्जन करना। इस प्रकार भेद हैं। इसमें जिसकी जैसी योग्यता हो वैसा पूजन करने का अधिकारी माना गया है। स्त्री प्रतिमा जी को स्पर्श नहीं करके पूजन कर सकती है। ऐसा सिद्धान्त का आशय है।

प्रश्न—स्त्री भगवान को नहीं छू सकती ऐसा किस शास्त्र में वर्णन किया है।

उत्तर—मूलाचार में

मूलाचार नामा ग्रन्थ में प्रमाण

पंच छ सत्त हत्थे सूरी अज्झावगोय साधू य ।
परिहरि ऊणज्जाओ गवासणेणेव वंदति । १९५ ।

अर्थ—समाचार अधिकार विषें आचार्यों का कथन है कि आर्यिकाओं को आचार्यों से पांच हाथ और उपाध्यायों से छह हाथ दूर तथा साधुओं से सात हाथ दूर गवासन से बैठ कर नमस्कार करना चाहिये। विचार कीजिये जब महान त्यागी स्त्री भी साधुओं को नहीं छू सकती तो भगवान को छूना तो बहुत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दूर की बात है। अब विचारिये कि गृहस्थी स्त्री कौन से आधार पर भगवान को छूकर अभिषेक करने का अधिकार रखती है।

भट्टारक इन्द्रनन्दीकृत नीतिसार में भी इस प्रकार बतलाया है।

न योषितः स्पृशेद्योगी काष्ठचित्रकृताऽपि च
किं पुनः स्पर्शनं तासां यासां स्मरणमापदे ॥६४॥

अर्थ—जब साधु, काठ, कागज पत्थर पर बनी हुई स्त्री का स्पर्श न करे तब साक्षात् कामिनी स्त्री को तो कैसे स्पर्श कर सकता है ?

चित्रस्थामपि संस्पृस्य योषितं नैव भुञ्यते ।
तस्मिन्नहनि भुञ्जञ्चेत्षष्टं स्यात्पापनाशनम् ॥६७॥

अर्थ—साधुलोक चित्ररूपी स्त्री को भी छूकर भोजन नहीं करते। यदि कदाचित् साक्षात् चेतन कामिनी का स्पर्श स्पर्शन इन्द्रिय से उपभोग हो जाये तो वे उस पाप को दूर करने के लिये दो दिन का (वेला) उपवास करें।

समझिये जब साधु लोगों के लिये स्त्री स्पर्श का निषेध हैं तब भगवान के प्रतिबिम्ब वास्ते कौन आज्ञा दे सकता है। क्योंकि सिद्धान्त विरुद्ध कार्य तो मिथ्यादृष्टि भी नहीं करें। फिर जैन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धर्म अनुयायी की पापरूप प्रवृत्ति कैसे हो सकती है, कदापि नहीं।

हमारे वीसपथ आम्नायका सूर्यप्रकाश नामक ग्रन्थ है, उसमें भी ऐसा ही लेख है। पृष्ठ ११८ में लिखा है—

सोमश्रीश्च तयाऽभाणि सखे श्रीमज्जिनालये ।
मयारब्धं शिवाप्त्यर्थं अभिषेको जिनस्य वै ॥५३३॥

उस सेठ की पुत्री ने सोमश्री (ब्राह्मण की बहु) से कहा कि हे सखी ! आज श्रीमज्जिनालय में परम पूज्य श्री जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक महोत्सव प्रारंभ है।

जिनागारे हि त्वमपि, कुंभमेकं जलं भृतं ।
मुञ्च तवापि पुण्याप्तिः, भविष्यत्येवमत्समा ॥५३७॥

अर्थ—हे सखी तू भी एक पवित्र प्राशुक जल से घड़ा भरकर श्री जिनेन्द्र भगवान के अभिषेक के लिये श्री जैन मन्दिर में जाकर चढ़ा। तुझको भी मेरे समान पुन्य की प्राप्ती होगी।

तस्या वचनमाकर्ण्य, ह्य कंकुँभसमोदतः ।
आधाय श्रीजिनेन्द्रस्य, चागत्स्वस्थानमंजसां ॥५३८॥

अर्थ—सेठ की पुत्री के वचनों को सुनकर सोमश्री एक जल का घड़ा भर कर श्री जिनेन्द्र मन्दिर जी में चढ़ा आई।

खयाल करो यदि स्त्रियें अभिषेक की अधिकारिणी होती तो जल का घड़ा मन्दिर में क्यों चढ़ाती ? जाकर अभिषेक करती। परन्तु नहीं किया। हठ की कोई मर्यादा नहीं होती।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—पंचामृताभिषेक पाठ पुस्तक के पान १७ के ५ वीं और छटी लाइन में चन्दना ने भगवान महावीर को आहार दिया था, उस समय नवधा भक्ति में भगवान के चरणप्रक्षालन नहीं किये होंगे इसका आपके पास क्या उत्तर है सो कहो ?

उत्तर—स्त्रियों के लिये साधुओं को स्पर्श करना सिद्धान्त से विरुद्ध कहा है। फिर भगवान और चन्दनासती का मार्ग से विपरीत होना उस पुस्तक में लिख दिया सो विपरीत मार्ग है। ऐसी पुस्तक को वांचकर (पढ़कर) लोग विपरीत मार्ग पर उतर आते हैं इसलिये यह अभिषेक पाठ पुस्तक मानने योग्य नहीं।

प्रश्न—क्या स्त्रियों को भगवान की पूजन करने का भी अधिकार नहीं है ?

उत्तर—स्त्रियों को भगवान की पूजन करने के अधिकार को कौन निषेध करता है। परन्तु अभिषेक करने की मनाई है। यदि अब भी आप न मानें तो क्या किया जावे। हां यह बात जरूर है कि सिद्धान्त बता दिया और फिर भी यदि वह व्यक्ति नहीं मानें तो वह उस ही समय से मिथ्यादृष्टि हो जाता है ऐसा गोम्मटसार जीवकांड में लिखा है।

प्रश्न—तो क्या मिथ्यात्व का डर बताकर जबरदस्ती करना चाहते हो ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तर—सुनो हमने आपको सब सिद्धान्त बताकर आपके सब बात गले उतारी है, न कि जबरदस्ती से।

आगे और भी स्पष्ट करते हैं कि भगवान अन्यथावादी नहीं हैं। क्योंकि सामान्य मनुष्य भी झूठ बोलने से डरता है तब वीतराग सर्वज्ञ और हितोपदेशी का उपदेश कैसे विपरीत हो सकता है सो ही यहां बतलाया जाता है। आलाप पद्धति में लिखा है कि—

सूक्ष्मं जिनोदितं तत्त्वं हेतुभिर्नैव हन्यते।
आज्ञासिद्धं तु तद्ग्राह्यं नान्यथावान्दिनो जिनाः ॥५॥

अर्थ—भगवान जिनेन्द्रदेव अन्यथावादी नहीं होते। उन्होंने जो भी तत्त्व का स्वरूप बतलाया है वह वैसा ही है।

प्रश्न—आपने कहा सो ठीक परन्तु इस प्रकार के प्रौढ़धर्म में ऐसा शिथिलाचारीपन कैसे होगया?

उत्तर—सुनो भगवान के ज्ञान में क्या झलका है, सो वे ही जानें। आचार्यों ने ऐसा बतलाया है कि—

यस्मिन्देशे यदाकाले यन्मुहूर्ते यद्दिने।
हानिर्वृद्धिर्यशोलाभस्तथा भवति नान्यथा ॥

अर्थ—हे भाई होना ऐसा ही था सोई भगवान के ज्ञान में झलका। काष्ठ की प्रतिमा जी उस समय प्रेरित थी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—आपका कहना ठीक है परन्तु यह उचित नहीं हुआ

उत्तर—सुनो हमारी समाज में या अन्य समाज में जब उच्छृंखलता फैलेगी तब कर्णधारों (बड़े पुरुषों) से ही। सो ही पंडित आशाधर जी बतलाते हैं।

पंडितैर्भ्रष्टचारित्रैः बठरैश्चतपोधनैः।
शासनं जिनचन्द्रस्य निर्मलं मलिनं कृतं ॥

इस श्लोक का अर्थ ऊपर हो चुका है 'जब बिगड़े जब दूध छाछ विचारी क्या बिगड़े' की कहावत तो हमारी समाज में शिथिलाचारी मुनि, भट्टारक और पण्डितों ने मार्ग को भृष्ट कर दिया। भोले गृहस्थ लोगों ने गुरु समझ कर उनका अनुकरण किया तो आज यहां हिंसक अधर्म जो जैनधर्म से प्रतिकूल था, जोर शोर से फैल गया। देखिये पाप क्रिया कोई नहीं सिखाता, पर बिना सिखाई आ जाती है। जैसे गाली देने का कहीं स्कूल नहीं है फिर भी सब सीख जाते हैं। उसी प्रकार पाप कार्य स्वयं आजाता है।

प्रश्न—तो अभिषेक के बारे में अब क्या रहा।

उत्तर—सिद्धान्त परम्परा से तो शुद्धाम्नाय जलाभिषेक की ही है।

प्रश्न—आप जलाभिषेक को पुरातन मानते हैं तो सिद्धान्त शास्त्रों से उसको यहां बतलाइये, जिस से हम भी मानें और इस पंचामत अभिषेक को स्थगित करें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तर—कई शास्त्रों में जलाभिषेक का प्रतिपादन है। सो ही यहां दिखाते हैं।

जिनेन्द्रदिव्यविम्बानां, गीतनृत्यस्तवैः सह।
नित्यं कुर्वते देवानां, क्षीरोदाम्भोभिषेचनैः ॥

सिद्धान्तसार प्रदीप श्लोक १३५ अध्याय ६ में लिखा है—

सुरानाथाः सुरैः समं,ऽभिषेकं नित्यं कुर्वते।
शुद्धवारिणा जिनेन्द्रम्, प्रतिमां शांति हेतवा।

स्वबोधरत्नाकर अध्याय ३ श्लोक २२ एवं अजितसैन कृत भूपाल स्तोत्र में भी ऐसा ही लिखा है तथा पूजासार नदीकृत सार चौबीसी विमल वाहन जी कृत।

तोयकुम्भं गृहीत्वा सुरैः, सहसुरानाथश्च।
जिनेन्द्रबिम्बानाञ्च स्नपनैश्च स्वहस्तैः विधिं ॥१३१॥३॥

माघनन्दीमलधारी कृत चतुर्विंशतिस्तवन में लिखा है—

स्नपनं च नित्यं कृत्वा शुद्धाम्बुक्षीरसागरा।
सुरैःसह सुरानाथाः लोकमंगलहेतवाः ॥ १२१ ॥

सिद्धनन्द्याचार्य कृत प्रबोधसार में लिखा है—

जिनेन्द्रप्रतिमां भव्यः स्नापयेत्शुद्धवारिणा।
तस्यनश्यति संतापः शरीरादि समुद्भवः ॥२२२॥

भट्टारक अजितसैन कृत पूजासार में लिखा है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्नपनं क्रियते भव्यैः शुद्धाम्बूकूपसागराः ।
तत्रभीतादिमांगल्यं कालपूजा भवेदियम् ॥ ५३ ॥

इस तरह के प्रमाण अनेक शास्त्रों में मिलेंगे, जिस में जिनेन्द्र का अभिषेक शुद्ध जल से ही है ।

वज्रनन्दी सार समुच्चय में लिखा है—

दुग्धपयोनिधेः शुभ्रसुस्नेहेन सुवारिणा ।
स्वभावपदमापन्नं सिद्धं संस्नापयेज्जिनम् ॥३६॥

वीरनन्दीकृत अमृत शीची में लिखा है—

श्रीमद्भिः सुरसैर्निसर्गविमलैः पुण्याशयाभ्याहृतैः,
शीतैश्चारुघटाश्रितैरवितथैः संतापविच्छेदकैः ।
तृष्णोद्रेकहरैरज प्रशमकैः प्राणोपमैः प्राणिनां,
तोयैर्जैनवचोऽमृतातिशयिभिः संस्नापयामो जिनम् ।२।

रत्ननन्दीकृत प्रबोधसार में लिखा है—

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटि
संलग्नरत्नकिरणछविधूसरांघ्रिम्
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टै—
र्भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिंचे ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शांतिकीर्ति कृत पूजासार में लिखा है—

अभिषेकं जिनेन्द्रबिम्बानां सलिलधारया ।
यः करोति सुरत्वं स लभतेही सुरालये ॥१८६॥

श्री विमलवाहन कृत रत्नाकरसार अध्याय ११ में लिखा है

श्री केसनं वाग्वनितानिवासं
पुण्यार्जनं क्षेत्रमुपासकानाम् ।
स्वर्गापवर्गयोरनैकहेतुम्:
जिनाभिषकोश्रयमाश्रयामि ॥५३५॥

उदासीन आश्रम इन्दौर के पूजासार ग्रन्थ में लिखा है—

चैत्यालये स्वगेहे वा शक्त्यार्हत्स्नपनक्रियां ।
विधाय विधिवत्स्नायाज्जिनस्नानीयवारिणा ॥२२॥

पुत्र की उत्पत्ति के समय

पुत्रोत्पतौ सुपात्राभ्यां दम्पतीभ्यां विधीयते ।
जिनस्नानीयतोयेन मज्जनं पूर्ववत्परं ॥३२॥

पंचोपचार मन्त्र में ऐसा लिखा है—

अनेकनदनदीवापीकूपतड़ागसरोवरसमुद्रादितीर्थवारिपूरितै मणिमयमंगलकवशै भगवदर्हन्प्रतिकृतिं स्नापयामः

(मन्त्र) ओश्म् ह्रीं ई श्री अनन्तज्ञानाय स्नापशुद्धाय क्ष्रौं ह्रीं हं नमः स्वाहा ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पांडुक शिला पर से गंधोदक के बारे में—

अरहत्परमेष्ठी नमःऽभिषिंचयामि शुद्धवारिणा।

आचार्य श्री सकलकीर्ति सिद्धान्तसार में इस प्रकार बतलाते हैं :—

अभिषेकमर्हन्नित्यं सुरानाथाः सुरैः समम् ।
द्विद्विप्रहरपर्यन्तमेकैकदिशिशान्तये ॥६९॥
कनत्कांचनकुंभस्य निर्गतैः निर्मलाम्बुभिः ।
महोत्सवशतैर्वाद्यैर्जयकोलाहलस्वनैः ॥७०॥
नित्यं प्रकुर्वते भूत्या विश्वविघ्नहरं शुभम् ।
जिनेन्द्रदिव्यविम्बानां गीतनृत्यस्तवैः सह ॥७१॥

अर्थ—देवेन्द्र जे हैं ते देवनि करि साथ एक २ दिशा में दोय २ प्रहर पर्यन्त अशुभ कर्म की शान्ति के निमित्त श्री जिनेन्द्र देव के दिव्य विम्बनि का गीत नृत्य स्तवनकरि तथा अनेक वादित्र-निकरि तथा महान उत्सव के सेकंडेनिकरि तथा जय जय रूप शब्द कोलाहलनिकरि तथा अन्य विभूति करि संयुक्त क्रांतिमान सुवर्ण कुंभनिके मुखते निकलता निर्मल जल करि निरन्तर समस्त विघ्नों का हरता शुभ महान अभिषेक नित ही करें हैं। ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्नोत्तर श्रावकाचार अध्याय २०, श्लोक १९६ में लिखा है :—

निजांगं स्वच्छनीरेण क्षालयन्ति स्वभावतः ।
येऽतिपापमलं तेषां क्षयं गच्छति धर्मतः ॥ १९६ ॥

अर्थ—जो स्वभाव से ही स्वच्छ जल से भगवान जिनेन्द्रदेव की प्रतिमा का अभिषेक करते हैं उस धर्म के प्रभाव सें उनका समस्त पाप रूपी मल नष्ट हो जाता है ।

आदिनाथ पुराण पर्व २२ में लिखा है—

दिक्चतुष्टयमाश्रित्य रेजेस्तंभचतुष्टयम् ।
तत्तद्वयोजादि वोद्‌भूत जिनानंतचतुष्टयम् ॥९७॥
हिरणमयीजिनेन्द्रार्चा तेषां वुध्नप्रतिष्ठिताः ।
देवेन्द्राः पूजयन्तिस्म क्षीरोदांभोभिषेचनैः ॥९८॥

अर्थ—चारों दिशाओं में चार मानंस्तंभ थे और ऐसे जान पड़ते थे मानो उन मानंस्तंभों के बहाने से भगवान के अनंत-चतुष्टय ही प्रगट हुये हैं ॥९७॥

उन मानस्तंभों के मूल भागों में सुवर्ण मय भगवान की प्रतिमा विराजमान थी, जिनकी इन्द्र लोक क्षीर सागर के जल से अभिषेक कर पूजा करते थे ॥९८॥

आदिपुराण पर्व ४१ में लिखा है कि राजा भरत को खोटे स्वप्न आये उसकी निवृत्ति के लिये क्या किया ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शांतिक्रियामतश्चक्रे दुःस्वप्नानिष्टशांतये ।
जन्माभिषेकसत्पात्रदानाद्यैः पुण्यचेष्टितैः ॥८५॥
गोदोहैः प्लाविताधात्री पूजिताश्च महर्षयः ।
महादानानि दत्तानि प्रीणितः प्रणयीजनः ॥८६॥

अर्थ—बुरे स्वप्नों से होने वाले अनिष्ट की शांति करने के लिये भगवान का अभिषेक करना और सत्पात्रों को दान देना आदि अनेक पुण्यरूप क्रियाओं से शांति कर्म करना प्रारंभ किया ॥ ८५ ॥

एवं गौ दुग्ध करि पृथ्वी का सिंचन (प्लावित) किया महर्षियों की पूजा की और बहुत बड़े २ दान दिये तथा अपने कुटम्बी लोगों को सब तरह से प्रसन्न किया ।

यहाँ पर श्लोक नं० ८५ में तो भगवान का अभिषेक करना लिखा, और श्लोक नं० ८६ में गो दुग्ध से पृथ्वी गीली की गई लिखा सो यदि पंचामृत अभिषेक होता तो गौ दुग्ध से पृथ्वी प्लावित करना अलग लिखने की क्या जरुरत थी । इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि भगवान का अभिषेक तो शुद्ध जल से ही होता था और शांति के वास्ते पृथ्वी गौ के दुग्ध से गीली की । ऐसा इन दोनों श्लोकों का आशय है ।

चरचासागर नामक ग्रन्थ की ३७वीं चरचा में लिखा है कि—

स्नपनं पूजनं स्तोत्रं जपं ध्यानं श्रुतिश्रवम् ।
क्रिया षड्डहिताः सद्भिदेव सेवांशुगेहिनाम् ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ—यहां पर सबसे पहिले स्नपन शब्द का प्रयोग किया गया है। न मालुम इस स्नपन शब्द से पंचामृत अभिषेक अर्थ कहां से निकाल कर जलाभिषेक को उड़ा ही दिया। चरचासागर के कर्त्ता पंडित चम्पालाल जी पांडेय ने मूल में जलाभिषेक का द्योतक शब्द का ही प्रयोग दिया है। परन्तु पक्षपात से पंचामृत शब्द लाकर ठूंस दिया है। इस ही को तो तीव्र मिथ्यात्व व पंथ पक्ष कहा जाता है।

उत्तरपुराण के अजितपुराण में स्वामी गुणभद्र कहते हैं—

अयोध्या नगरी के राजा जितशत्रु महारानी विजय सेना के यहां भगवान् अजितनाथ के जन्म समय इन्द्र ने मेरू पर्वत पर क्षीर सागर के जल से ही अभिषेक किया। इसी प्रकार और २२ वीं तीर्थंकर हुए उनका भी इन्द्र ने क्षीरसागर के जल से ही अभिषेक किया।

विचार करो कि भगवान अवधिज्ञानी और इन्द्र भी अवधि ज्ञानी, अगर पंचामृत अभिषेक धर्म होता तो क्षीरसागर के जल से अभिषेक क्यों करते? परन्तु पंचामृत अभिषेक धर्म नहीं, किंतु हिंसा मार्ग होने से देवेन्द्र जो अव्रति है तो भी पाप क्रिया के जीव संसार भ्रमण करता है ऐसा जान पाप से डर गये। परन्तु आज कल के लोग पाप करके अपने को धर्मात्मा बना कर लोगों को ठगते हैं और आप नरकगामी बनते हैं। हाय २ रे कलिकाल! तेरी वलिहारी जो जैन धर्म में भी पोपलीला फैलाई।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तरपुराण में अजितनाथ स्वामी के वर्णन में गुणभद्र स्वामी लिखते हैं।

बालार्कसन्निभं वालं जलैः क्षीरापगापतेः ।
स्नापयित्वा विभूष्याख्याँ प्रेख्याप्यश्याभिनंदनं ॥२॥

अर्थ—अनादि काल से तीर्थंकरों का अभिषेक जल से ही होता आया है न कि पंचामृत से। कहीं भी कथन राज मार्ग सिद्धांत है न कि अपवाद मार्ग मिथ्यात्व।

इस बात की खोज श्रीमान लाला जुगलकिशोर जी मुखत्यार सरसावा वालों ने खूब की है।

श्री आदिनाथपुराण में पर्व १३ श्लोक नं० ११०, १११ ११२, १२०, १२१, १२३, १२५, १२६, १२७, १२८, १३१, १३२, १३४ वें श्लोक के देखने से यह जरूर विश्वास (खातरी) हो जाता है और स्पष्ट कह दिया जाता है कि पंचामृत अभिषेक के लिये जो ग्रन्थों में उल्लेख मिलता है सो जाली पुरुषों ने ग्रन्थों में जाली श्लोक बना २ कर महत्पुरुषों (आचार्यों) के नाम की नामावली दे दी है। उस पर विश्वास कर भोले पुरुष दृढ़ श्रद्धान कर बैठे हैं। न्याय से और लौकिक रूढ़ि से भी विचार किया जावे तब भी पंचामृत जैन धर्म के उसूलों से जायज होगा ही नहीं। हां, मिथ्या धर्म वालों की बात और है। जैसे मुसलमान (इसलामी) धर्म में जिनावर वह मारने की धमकी और वैष्णव सम्प्रदाय में गाय मारने का प्रायश्चित कह कर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धमकी बताई जाती है। ऐसे ही हमारे इस जैन धर्म में भी ऐंसी धमकियें दे दे कर बतलाया कि आगम की आज्ञा नहीं मानोगे तो मिथ्यादृष्टि हो जावोगे। इस धमकी से विचारे अनभिज्ञ लोग (भोले पुरुष) धमकी में आकर यथार्थ मार्ग से विचलित (भ्रष्ट) होते जा रहे हैं। इसलिये अब इस ग्रन्थ को पढ़ कर अच्छी तरह से समझकर जल अभिषेक करने का ही अटल श्रद्धान करो।

प्रश्न—आपका कथन सर्वथा जैन धर्म अहिंसा धर्म के अनुकूल जीव दया का प्रधान साधन है और हमें उसका एक २ अक्षर मान्य है। परन्तु आज हम क्या करें ? जिधर देखते हैं वहां ही पंचामृत अभिषेक का ही दौर दौरा मिलता है। मुनिराज और आचार्य, आर्यिकायें व ऐलक क्षुल्लक, क्षुल्लिकायें, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी, अव्रतिश्रावक, श्राविकायें, इन्होंने प्रायः इसी में धर्म मान रखा है। फिर क्या करें जब हमारे सहपाठी लोग आकर खदेड़ते हैं तब उनकी बात सुनने को भी दिल नहीं चाहता। परंतु प्रेम वश उनकी बात सुनते हैं तब हमारा यह पापी मन भी पिघल जाता है और रोकते रोकते भी उनकी बातों पर श्रद्धानसरीखा हो जाता है। क्योंकि हमने सिद्धान्त तो देखा नहीं है।

कहा क्या जावे कुछ दिन पूर्व ही एक जैन भाई ने हमें एक पुस्तक लाकर दी, उसका नान था, "अभिषेक पाठ" उसे हमने देखा उसमें महान आचार्यों की नामावली थी। जैसे आचार्य पद्मनंदि, स्वामी कुन्द-कुन्द, स्वामी पूज्यपाद, महाराज उमास्वामी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आचार्य गुणभद्र तथा और भी कई धर्मज्ञ पुरुषों का नाम सुनकर हमारे हृदय में न मालूम क्या क्या भावनाएं खड़ी हो जाती हैं। और हम कर्तव्य विमूढ हो जाते हैं। इसलिये जो यह आपका 'आर्षमार्गमार्तण्ड' नामक पुस्तक कर्तव्य विमूढ पुरुषों को अनधिकार चेष्टा पंचामृत अभिषेक और स्त्रियों को भगवान का स्पर्श यानि अभिषेक करना, भगवान को परिग्रहधारी बनाना जैसे, केशर पुष्प चढ़ाना और भगबान को मुकट और हार माला पहिराना तथा भगवान को दुग्ध में डुबो देने, के पाप से बचा सकेगी। आज इस पुस्तक की अत्यन्त जरूरत थी। देखिये जैन धर्म से विभिन्न जो धर्म हैं वे भी जिनेन्द्र भगवान के मार्ग को कितनी ऊंची दृष्टि से देखते हैं। श्री भर्तृ हरी शृंगार शतक के वैराग्य प्रकरण में लिखते हैं—

एकोरागिषु राजते प्रियतमा देहार्द्धधारी हरो,
नीरागेषु जिनो विमुक्तललना संगो न यस्मात्परः।
दुर्वारस्मरवाणपन्नगविषव्यासक्तमुग्धोजनः।
शेषःकाम विडंबितो हि विषयान्भोक्तुं न मोक्तुं क्षमः॥

अर्थ—रागी पुरुषों में तो एक महादेव शोभित होता है जिसने अपनी प्रियतमा पार्वती को आधे शरीर में धारण कर रक्खा है और विरागियों में तो जिनदेव शोभित होते हैं। जिनके समान स्त्रियों का संग छोड़ने वाला दूसरा कोई नहीं है। शेष लोग तो दुर्निवार काम देव के बाणरूप सर्पों के विष से मूर्छित

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हुए हैं। जो काम की विडंबना से न तो विषयों को भली-भाँति भोग सकते हैं और न छोड़ सकते हैं ॥ ६७ ॥

अन्य धर्मी भी जिनेन्द्र भगवान् की कितनी महिमा वर्णन करते हैं। क्योंकि उनमें पूर्ण वीतरागता का सद्भाव है। ऐसे जिनेन्द्र भगवान् को परिग्रहधारी काम भोगी स्त्रियों जैसे पद्मावति के शिर पर पार्श्वनाथ जिनेन्द्र को विराजमान करना कितनी हंसी की बात है। हमारे यहां सिद्धान्तों में जो वर्णन मिलता है सो यहाँ बताया जाता है—

सिद्धांत क्या है ?

सिद्धांत में जो पदार्थ का स्वरूप बतलाया है, उसकी मर्यादा के अनुकूल प्रवृति करने का नाम ही तो व्यवहार धर्म कहलाता है। हठग्राहता से कोई वात धारण की जावे वह धर्म नहीं हो सकता। ऐसा सिद्धान्त समझाता है।

दोहा

लीक लीक गाड़ी चले, लीक हि चले कपूत ।
बिना लीक तीनों चले, कायर कूर कपूत ॥ १ ॥

अर्थ—लीक उसे कहते हैं कि जिसमें धर्म का तथ्य हो जहां पर धर्म का तथ्य न हो वहां उसे अधर्म कहते हैं। ऐसा काम करने वाला कपूत कहलाता है।

लीक लीक गाड़ी चले, लीकहि चले सपूत ।
बिना लीक तीनों चले, सायर सिंह सपूत ॥ १ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ—तात्पर्य यह है जिस कार्य में धर्म का तथ्य न हो ऐसे कार्य को समझदार छोड़ देवें, क्योंकि वे विचारवान पुरुष हैं। मनुष्य पर्याय का पाना बड़ा दुर्लभ है। यह पर्याय पाई और फिर भी आत्म स्वभाव का परिज्ञान नहीं किया तो मनुष्य जन्म लेकर क्या किया। आगे और कहते हैं—

देखा देखी साधे जोग, छीजै काया बाढ़े रोग। की यह कहावत पूरी तरह चरितार्थ हो रही है। देखो यह हुंडावसर्पिणी काल है इसमें नहीं होने की भी बात हो जाती है।

जैसे तीर्थंकरों के पुत्री नहीं होती। किन्तु आदिनाथ स्वामी के ब्राह्मी और सुन्दरी नामा दो पुत्री हुई।

तीर्थंकरों का मान भंग और चक्रवर्ती का मान भंग नहीं होता किन्तु भरत तथा शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरहनाथ स्वामी का वृषाभचल पर्वत पर अपना नाम लिखने के लिये भी जगह नहीं मिली।

तीर्थंकरों पर उपसर्ग नहीं होता किन्तु पार्श्वनाथ स्वामी पर उपसर्ग हुआ। तीर्थंकरों का अपवाद नहीं होता किन्तु महावीर स्वामी का अपवाद हुआ। और लोग कहते हैं कि इनकी पुत्री हुई। केवलज्ञान पैदा होने के पश्चात् इनके गोशाल्या के निमित्त से पेचिस की बीमारी हो गई।

सो हे भाई! इस काल में जितना भी हो जावे सो भी थोड़ा ही है। कहां तक कहाजावे तीर्थंकरों और मुनियों से जैनी ही नहीं चूकते जैसे प्रतिमाजी पर केशर पुष्प चढ़ाते तथा भगवान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के गले में पुष्पों का हार पहिनाते, माथे पर पुष्पों का मुकट बाँधते दुग्ध में भगवान की प्रतिमा डिबो देते उन्होंने वीतराग मार्ग को समझा ही नहीं। यह वीतराग मार्ग खांडे की धार है, इस पर चलना सहज काम नहीं। जो लोग ऐसा कहते हैं कि मैनासुन्दरी ने अभिषेक किया सो यह स्मरण रखना चाहिये कि उसने प्रतिमा का अभिषेक नहीं किया किन्तु सिद्ध यन्त्र का अभिषेक किया। शास्त्र प्रमाणों से यह भली भांति सिद्ध है कि स्त्री प्रक्षाल नहीं कर सकती। और शास्त्रों में यह भी लिखा है कि प्रतिमा पर केशर पुष्प चढ़ाना भी उचित मार्ग नहीं है। फिर भी लोग हठ से शास्त्र की अवज्ञा करते हैं उन्हें जो पाप का वन्ध होगा और उसका जो फल भोगना पड़ेगा वह वचनातीत है। इसलिये शास्त्र मर्यादा का उल्लंघन नहीं करना चाहिये। क्योंकि हम मन्दिर में पापक्षय के लिये आते हैं न पाप वर्धक क्रियायें करने के लिये। इसलिये जो मूल संघाचार्यों द्वारा प्रतिपादन किया गया है वही शास्त्र विहित मार्ग है, उसी का अवलंबन करना चाहिए। देखो भगवान कुंदकुंदाचार्य बोध पाहुड़ में कहते हैं—

तिल तुसमत्त णिमीत्तसम वाहिर गंथसंगहो णित्थ।
पव्वज्ज हवइ एसा जह भणिया सव्वदरसीहिं। ५५।

अर्थ—संस्कृत टीका भट्टारक श्रुतसागर जी प्राभृत में तिल ओसत्त निमित्तं तिलस्य पितृप्रियबीजस्थ को शत्व मात्रं तिलतुषमात्रमपि अश्रमण परिग्रहः। समवाहिरगंथसंग हो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णत्थि तिल तुष मात्र समो ऽपि वाह्य ग्रंथस्य संग्रहो नास्ति न विद्यते, पव्वज्ज हवई एसा प्रव्रज्या भवत्येषा, जह भणिया सव्वदरसीहिं—यथा भणिता सर्वदर्शिभिः सर्वज्ञदेवैरिति ॥

अष्टपाहुड़ में पं० जयचन्द जी छावड़ा कहते हैं तथा पंडित पार्श्वदास जी न्यायतीर्थ का कहना है कि—

जिसमें तिलतुषमात्र परिग्रह का कारण राग मात्र और तिलतुषमात्र वाह्य परिग्रह का ग्रहण नहीं है, ऐसी दीक्षा सर्वज्ञ देव के द्वारा कही गई है।

षट्प्राभृत के सूत्रप्राभृत की श्रुतसागरी टीका देखिये—

वालग्गकोडिमतं परिगह गहणांण होइ साहूणं।
भुंजइ पाणिपत दिएणएणं इक्कठाणम्मि॥१७॥

टीका संस्कृत—वालग्गकोडिमत्तं (वालस्यरोम्णोऽग्रकोटि-मात्रं, अग्राग्रमात्रं, अति बाल्यमपि) परिग्गह गहणांण होई साहूणं—(परिग्रहस्य ग्रहण स्वीकारो न भवति साधूनां निरम्बर-यतीनां) भुंजइ पाणिपत्तो (भुञ्जीत भोजनं कुर्वीत कुर्यात्पणि पात्रे निजकरपुटे श्रावकेण दत्तं नरवव्रतिना दत्तं भुँजीत) दिएणएण इक्कठाणम्मि, प्रासुकभोजनं किल सर्वत्र गृह्यते इति जैनाभाषा ब्रुवन्ति तदनेन विशेषव्याख्यानेन प्रत्युक्तं भवतीति भावितव्यं) इक्कठाणम्मि-उद्भोभुत्वा एकवारं भुंजीतेति यो बहुवारं भुक्ते स वंदनीयो न भवतीति भावार्थः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हिन्दी टीका

जैन शास्त्रों में साधुओं के लिये बालके अग्रभाग (नोक) के बराबर भी परिग्रह नहीं बताया गया। क्योंकि वे तो एक ही बार अपने हाथ रूपी पात्र में दूसरे का दिया हुआ प्राशुक आहार लेते हैं।

आगे पंडित पन्नालाल जी सा० सोनी क्रियाकलाप नामक पुस्तक के पृष्ठ १०१ पर इस प्रकार बतलाते हैं—

परिग्रहप्रमाण महाव्रत के स्वरूप का लेख ओली नं० १४ वीं में वा अप्पं वावहुं वा अणुं वा थूलं वा सचित्तं वा अचित्तं वा अमुत्थं वा वहित्थं वा अवि वालग्ग कोड़िमित्तं पि णेव सयं असमण पाउग्गं।

नो देखिये बालके (केशके क्रोड़वें भाग में का एक भाग मात्र मुनि के पास हो तो वह परिग्रहवान माना है फिर हमारे भाई कौन से आधार से मुनियों के प्ररिग्रह नहीं मान कर भगवान की प्रतिमा जी पर केशर और पुष्प चढ़ाते हैं। परिग्रहधारी मुनी को निगोद का पात्र वतलाया है, ऐसा कुन्द कुन्द स्वामी के वाक्यों को पढ़कर भी आखें नहीं खुलती। कितन वज्र की छाती है? ये कौन सी धरा में जावेंगे।

उत्तर—आदिनाथ पुराणपर्व २३ श्लोक नं० १०० देखिये—

स्त्रग्‌‌द्धु तगंधै:सुगंधीकृताशै भ्रमद्भृ गमालाकृतारावहृद्यैः ।
जीनांध्रीस्मरंतीवीभो: पादपीठं समानश्च भक्त्या तदा शक्रपत्नी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ—भगवान के समोशरण में जहाँ पर भगवान विराजमान थे उनके आसन के नीचे जो सिंहासन था उसपादपीठकी इन्द्राणी ने चन्दन से पूजन की ।

पद्मनंदि पंचविंशतिका में लिखा है कि —

यद्वद्वचोजिनपतेर्भवतापहारि,
नाहंसुशीलमपीह भयामितद्वत् ॥१॥
कर्पूरचन्दनमितीव मयार्पितंस,
त्वत्पादपंकजसमाश्रयणं करोति ॥२॥

अर्थ—जैसे भगवान के वचन समस्त संसार के संताप को हरण करने वाले हैं, उसी प्रकार अत्यन्तशीतल भी हैं। परन्तु मैं संसार के सन्तापों को हरण करने वाला नहीं हूँ। इसलिये ऐसा समझ कर मेरे द्वारा चढ़ाया हुआ यह कपूर मिला हुआ चन्दन है, भगवान आपके चरण कमलों के आश्रय को करता हूँ। यह चन्दन भी पृथ्वी पर चढ़ाया अंगुष्ठ पर नहीं लगाया, ऐसा साफ जाहिर है ।

प्रश्न—आपने जो शास्त्रों के प्रमाण दिये सो ठीक परन्तु हमारे मित्र हमें कई ग्रन्थ लाकर देते हैं उनमें तो केशर चर्चने का कथन है। उन ग्रन्थों के नाम ये है ।

१ चर्चासागर २ त्रिवर्णाचार ३ पद्मपुराण ४ हरिवंशपुराण ५ भावसंग्रह ६ सूर्यप्रकाश ७ संशयतिमिरप्रदीपका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

८ अभिषेक पाठ ९ मनोमती खंडन १० सागारधर्मामृत ११ स्वधर्मप्रदीपिका १२ सुधर्मश्रावकाचार आदि कई ग्रन्थ देखने में आते हैं। इनमें सैकड़ों ग्रन्थों के नाम हैं। अब हम क्या करें।

उत्तर—सुनो ये जितने भी ग्रन्थों के नाम लिये सो सब जैनाभासोंद्वारा (जो काष्ठादि संघ हुये हैं) निर्मापित हुए हैं मूल संघ आचार्यों का इनमें एक भी ग्रन्थ नहीं है।

प्रश्न—हम आपकी कैसे मानें। श्री सेठ बनजीलाल जी ठोलिया जोहरी जैपुर वालों की ग्रन्थमाला से प्रकाशित होने वाली १ पुस्तक अभिषेक पाठ में जितने भी नाम दिये हैं सो सब मूल संघी आचार्यों के नाम हैं।

उत्तर—इन काष्ठासंघियों ने मूल संघाचार्यों के नाम दे देकर पुस्तकें छाप २ कर प्रकाशित की हैं जिससे आप समान भोले लोग उनके चंगुल में फंस जाते हैं। आप विचार तो करो कि जिन आचार्यों के उन्होंने नाम दिये हैं उन आचार्यों के यहां पर कई ग्रन्थ बनाये हुये मौजूद हैं, परन्तु उन ग्रन्थों में न तो पंचामृत अभिषेक का नाम और न स्त्री अभिषेक प्रतिपादन और न भगवान की प्रतिमा जी पर केशर और पुष्प चढ़ाने का नामोनिसान; फिर उन ग्रन्थों में उन आचार्यों के नाम लिखने को कैसे मान लिया जावे। अगर ऐसा ही होता तो उन आचार्यों के बनाये हुये कई श्रावकाचार है उनमें भी कुछ न कुछ उल्लेख अवश्य होता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परन्तु मूलसंघी आचार्य तो इन कामों को संकल्पी हिंसा मानते थे फिर आपके बनाये हुये श्रावकाचारों में इन कृत्यों का नामोल्लेख क्यों किया ? समझो और न्याय से बिचार करो जैनधर्म सदासे वीतरागी मार्ग-निवृति मार्ग है न कि प्रवृति मार्ग।

वसुनन्दी संहिता में इस प्रकार लिखा है :—

अनर्चितपदद्वन्द्वं कुंकुमादिविलेपनैः ।
बिम्बं पश्यति जैनेन्द्रं ज्ञानहीनः स उच्यते ॥

अर्थ—कुमकुम आदि ते उत्पन्न भया विलेपन द्रव्य करि अनर्चित चरणयुगल ऐसे जिनेन्द्रका बिम्ब ने देखे हैं सो ज्ञानहीन कहिये है। सो ये बात कैसी खुलासा समझाइये ?

उत्तर—सिद्धान्तों के कथय को समझने के लिये बुद्धि की बहुत आवश्यकता हुआ करती है नहीं तो हर कोई शास्त्र का वक्ता बन जावेगा। सो हो नहीं सकता। यह विचारणीय है कि जबतक भगवान् के प्रतिबिम्ब के केशर नहीं लगे (बिना लगे) देखे तो वह अज्ञानी ज्ञानहीन माना है। ऐसा शास्त्रों में बतलाया जाता है।

इस पर से पूछा जाता है कि पूज्यता केशरमें रही या भगवान् के प्रतिबिम्ब में ? अगर केशर में पूज्यता है तब मूर्ति की प्रतिष्ठा कराकर विराजमान करने की क्या जरुरत ? फिर तो केशर की टिपकी ही को या केशर के ही डिब्बे को धर लिया जावे। प्रतिमा जी की प्रतिष्ठा में लाखों रुपया क्यों खर्च किया जावे। अगर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

केशर में पूज्यता नहीं, पूज्यता श्री जिनेन्द्रदेव के विम्ब में है तो फिर केशर लगाने की क्या जरूरत है।

देखो यह जिनेन्द्र का वीतराग निष्परिग्रही मार्ग है। इसमें विपरीतता को जरा भी स्थान नहीं। यह मार्ग परिग्रहधारी गुरुओं और भट्टारकों ने पतित बना दिया। कहां तक कहा जावे इन लोगों ने शास्त्रों में यहां तक लिख डाला कि मुनि भी परिग्रह रख सक्ता है। भगवान कुन्दकुन्द के बचनों पर भी पानी फेर दिया। सो ही इन्द्रनन्दी नीतिसार में बतलाया है कि—

क्वचितकालानुसारेण सूरिर्द्रव्यमुपांहरेत्।
गच्छपुस्तकवृद्ध्यर्थमयाचीतमथल्पकम्॥

अर्थ—किसी किसी दुष्प्राप्य देश में कालानुसार आचार्य मुनिसंघ की वृद्धि होगी, इसलिए बिना मांगे हुए श्रावकों से दिये गये कमन्डलु पिच्छी, पुस्तक, लेखनी, पुट्टे वेष्टन, आदि स्वल्प द्रव्य को वस्तु को ब्रह्मचारी के हाथ सौंप कर रखे। यहां पर द्रव्य पद का अर्थ उस वस्तु से रखा है जिससे ज्ञानोपकरणादि बनते हैं। जैसे कागज, ताडपत्र, स्याही, कलम तथा मयूरपिच्छी, डोरा, तूम्बी, पट्टा, तृण, सूई तथा अर्जिका, ऐलक, क्षुल्लक, चुल्लिका के योग्य शुद्ध वस्त्र आदिक का वाचक, रुपये पैसे का वाचक नहीं।

कहने का तात्पर्य यह रहा कि पहिले भट्टारक लोग मुनि थे और फिर उस मार्ग से गिरे तब उन्होंने भगवान को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

केशर पुष्प प्रतिमा पर लगाना और चढ़ाना तथा निर्गन्थ वीतरागी आचार्य तथा साधु परिग्रह रखे तो दोष नहीं ऐसा लिख मारा, क्योंकि इन लोगों को तो भोग भोगना था। जैसे पालकी में बैठना, फौज पलटन रखना तथा लाखों रुपयों की जायदाद रखना, इनमें दोष नहीं इस प्रकार के कथन ग्रन्थों में लिखवा २ कर भर दिये। कहाँ तक कहा जावे ये लोग जब भगवान की प्रतिमा जी पर आवरण करवाने में नहीं चूके तब अन्यजन से कैसे चूकेंगे। परन्तु इसके निषेध रूप शास्त्रों में विधान मिलता है सो यहां बतलाया जाता है।

केशर चर्चने का निषेध

एक संधी भट्टारक संहिता में केशर चरचने का निषेध है लिखा है—

पश्येन्नो जिनविम्बस्य चर्तितंकुमकुमादिभिः।
पादपद्मद्वयं भव्यैः तद्वंद्यं नैव धार्मिकैः॥

अर्थ—कुंकुमादिकरि चर्चित कहिये लिप्त ऐसा जिनविम्ब का पादपद्म द्वय है सो नहीं देखे। क्योंकि धर्मात्मा भव्य जीवनि करि वो चरण युगल बंदने योग नहीं हैं। तातें दर्शन ही न करे। ऐसा ही सिद्धान्तसार प्रदीप अध्याय ५ में लिखा हैं कि—

यज्जिनचन्द्रविम्बस्य चर्चितं कुम्कुमादिभिः।
पादपद्मद्वयं भव्यैस्तद्वंद्यं नैव धार्मिकैः॥१२४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वबोधरत्नाकर ग्रन्थ में लिखा है—

पादद्वयं जिनेन्द्रस्य चन्दनैस्तुसचर्चितं ।
धार्मिकस्ते न पश्यन्ति महापापानिश्चंथकम् ॥१६॥

श्री अजितसेन कृत भूपालस्तोत्र में लिखा है—

काश्मीरपंकहरिचन्दनसारसान्द्र ।
निष्पन्दनादिरचितेन बिक्षेपणेन ।
अव्याजसौरभतनूसुमुखप्रतिमाः ॥
संचर्चयामि भवदुःखविनाशनाय ॥११८॥

माघनन्दी मलधारी कृत चतुर्विंशति स्तवन में लिखा है—

अनर्चितपदद्वदकुम्कुमादिविलेपनैः ।
जिनेन्द्रविम्बं पश्यन्ति ते नराः धार्मिका भुवि ॥

सिद्धनन्द्याचार्य कृत प्रबोधसार में लिखा है—

कर्पूरकुम्कुमरसेन सुचन्दनेन,
श्रीमज्जिनेन्द्रचरणाग्रविक्षेपणेन ।
पूजयन्ति ये भविजनाः सुगंधबाधा,
दिव्यांगना परिवृताश्च सदा बसन्ति ॥

भट्टारक अजितसेन कृत पूजासार में लिखा है—

चन्दनागुरुकाष्मीरसम्भवैः सुविक्षेपणैः ।
जिनेन्द्रचरणाम्भोज, चर्चयन्तिस्म युगपदं ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ—इन सब श्लोकों का ऊपर के श्लोकों के अनुकूल ही अर्थ है। इसलिये दुबारा नहीं लिखा है। आगे और भी भाषाकारों की कृति बतलाते हैं। जिन्होंने पुरातन आगमपरंपरा के अनुकूल ही लिखा है, सो ही यहाँ बतलाया जाता है—

केशर के बारे में सवैया इकतीसा

गुणस्थान तेरह में केवल प्रकाश भयो,
इन्द्र पूजा करने को आयो भगवान की।
तीजी कटनी पै दूर खड़ो भगवान सूं,
चढ़ावे शुद्ध द्रव्य जासु कला बढ़े ज्ञान की।
धर्मसंग्रह ग्रन्थ माहिं व्याख्यान कियो,
आचारज जिन प्रतिमा हैं जिनही समान की।
ताते जिनविम्बापाय लेपन लगाओ कछु,
लेप जो लगावे ताकी बुद्धि है अज्ञान की ॥१॥
सराग चिन्ह देखके नमन करे शीसधार,
सो तो मिथ्यामती जिनवाणी इम गायो है।
तापे दुरबुद्धि कहे हमारो सुभाव शुद्ध,
बाहिर नमत कैसे सम्यक पलायो है।
ताके छल खंडवेकूं सुगुरु बहुरि कहे,
एहुतो एकान्त तुम मनतें उपायो है।
अन्तरग शुद्ध सो तो बाहिरहु शुद्ध होय,
बाहिर हु शुद्धता को नेम न बतायो है॥२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस प्रकार भाषाकारों की भी मत है कि भगवान की केशर से जरूर पूजा होती है। किंतु वह केशर भगवान के चरण कमलों के पास क्षेपण करना चाहिये नकि भगवान के चरण कमलों पर लेप करना चाहिये।

प्रश्न—शास्त्रों में ऐसा लिखा मिलता है कि केशर भगवान के चरणों में चरचना चाहिये सो उसे कैसे छोड़ दिया जावे ?

उत्तर—शास्त्रों में भगवान की पूजा अष्ट द्रव्य से करना कहा है। और फिर केशर को तो चरणों पर चढ़ाना बाकी के द्रव्यों को जमीन पर चढ़ाना यह कितनी भूल है। क्योंकि जो द्रव्य जमीन पर चढ़ाया जावे तो सभी द्रव्य जमीन पर चढ़ाये जावें। यदि एक एक द्रव्य भगवान के चरणों पर चढ़ाया जावे तो सव द्रव्य चरणों के ऊपर ही चढ़ाना चाहिये। और यह होता नहीं तो क्या द्रव्यों में भी ऊंच नीचपने का फर्क है ? सो कोई द्रव्य तो उत्तम सो भगवान के बदन पर चढ़ावे। और कोई द्रव्य हीन सो जमीन पर चढ़ावें। आप विचार करो कि भगवान वीतराग निष्परिग्रही हैं और हम सभी ऐसा ही मानते हैं फिर भी हठ के कारण अपनी बात को पुष्ट करने के लिये भगबान के बदन पर केशर चढ़ाकर उनको परिग्रहधारी बनाते हैं। सोचो इस पाप से कैसे बचोगे ?

अगर ऐसा ही है तो फिर श्वेताम्बर मतावलम्बियों की प्रतिमा को आप कौन से आधार से मिथ्यादृष्टि कहते हैं। आप भी तो आपकी प्रतिमा का परिग्रह सहित मानकर उनके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपासक बनते हो।

खयाल करा हे जीवो ये जैनधर्म तुम्हें वारम्वार नहीं मिलेगा और इस हटके पीछे आत्मा पापिष्ठ बन जायगा। जिसके फल से नरक और निगोद का पात्र बनना पड़ेगा।

क्योंकि धोका बाजीका फल बहुत बुरा होता है। फिर धोका बाजी भी भगवान मानकर। हाय हाय रे जैनी कहलाने वाले धर्मात्माओ! धन्य हैं तुम्हारे कलेजे को, वह पत्थर का है या वज्र का, जो पापकी परवाह ही नहीं करते।

प्रश्न—ज्यादा न कहो कलेजा थर्राता है परन्तु शास्त्रों की आज्ञा भंग करने का भी तो डर लगता है। अभी हुआ ही क्या है। पुष्प भी तो प्रतिमा जी पर ही चढ़ाया जाता है। क्योंकि उसका उल्लेख भी तो शास्त्रों में मिलता है।

देखिये पंडित आशाधर जी कृत जिनयज्ञकल्प अ० ५ में लिखा है—

जिनांध्रिस्पर्शमात्रेण त्रैलोक्यानुग्रहक्षमाम्।
इमां स्वर्गरमां दूतीं धारयामि वरस्त्रजां ॥११६॥

श्रीजिनेश्वरचरणस्पर्शादनर्घ्या जाता साभाला।
महाभिषेकावसाने बहुधनेन ग्राह्या भव्यश्रावकेणेति॥

आचार्य पूज्यपादकृत जिनाभिषेक में भी लिखा है।

पुष्पस्त्रऽमजरीफलमलघुजिनेन्द्रांध्रिदिव्याध्रिवस्था।

आराधना कथा कोष में भी ऐसा लिखा है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तदागोपालकः सोऽपि स्थित्वा श्रीमज्जिनाग्रतः ।
भो सर्वोत्कृष्ट मे पद्म गृहाणेदमिति स्फुटम् ॥१५॥

उक्त्वा जिनपादाब्जो परिक्षिप्त्वासुपंकजम् ।
गतो मुग्धजनानां च भवेत्सत्कर्मशर्मदम् ॥१६॥

निर्वाणकाण्ड की गाथा में गोमटेश भगवान को नमस्कार करते हुए बतलाया है कि—

गोम्मटदेवं वंदमि पंचसयं धणुह देह उच्चंतं ।
देवह कुणंति वुढि केशरकुसुमाणतस्स उवरम्मि ॥

अब तो खयाल करिये कि आपके सामने कितने पुरावे उपस्थित किये, इस पर श्रद्धान करें या नहीं ! अगर श्रद्धान नहीं करते तो मिथ्यादृष्टि हुये जाते हैं ।

पदमक्खरं च एक्कं पि जोण रोचेदि सुत्तणिद्दिठं ।
सेसं रोचतो विव मिच्छाइट्ठी मुणेयव्वो ॥

अब कहो क्या किया जाय, यदि श्रद्धान नहीं करें तो मिथ्या दृष्टि अगर श्रद्धान करते हैं तो आपके कहने के अनुकूल हिंसक। अब इस पाप से या मिथ्यात्व से कैसे बचें । यह भी एक बड़ी समस्या हो गई । जैसे चकवूंदरी हुआ करती है उसे सर्प खा जाये तो मर जावे और छोड़ देवे तो अँधा होवे । यही दशा हमारी हो रही है सो जल्दी से जल्दी हमें समझाइये ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तर—आपका कहना विलकुल ठीक है क्योंकि आपने जैन सिद्धान्तों का अवलोकन नहीं किया। अगर अवलोकन करते तो शीघ्र ही इन पोप लीलाओं को समझ लेते। देखो जो जो प्रमाण आपने दिये वह प्रमाण सब काष्ठासंघियों के वनाये हुये हैं न कि मूल संघियों के।

प्रश्न—तो क्या पं० आशाधर जी भी काष्ठासंघी थे।

उत्तर—हां, तुमने देखा नहीं पंडितजी ने सागारधर्मामृत में रात्रि को खाने, दिगपालों की पूजा करने, रुपयों से पर स्त्री सेवन को दोष नहीं बताया। फिर ऐसे पुरुषों को मूल संघी कैसे समझ लेना चाहिये। आगे और प्रमाण दिये गये हैं, जिनमें स्वामी पूज्यपाद का नाम लिखा है सो धोखेवाजी है, क्योंकि पूज्यपाद स्वामी के कई ग्रन्थ मौजूद हैं उनमें न पंचामृत अभिषेक और न भगवान की प्रतिमा जी पर केशर पुष्प चढ़ाने का कोई कथन है। फिर उस कथन को स्वामी पूज्यपाद का कैसे माना जावे ?

रहा गोपाल धनदत्त का सो वह तो जैन नहीं था जो गुवाल शूद्र होता है सो भगवान की पूजा नहीं करता अगर शूद्र की पूजन करना मानते हो तो बम्बई मन्दिर प्रवेश कानून को मानने में क्या आपत्ति थी। किन्तु सच्चाई छिपती नहीं यह वम्बई हाई-कोर्ट के फैसले से भी स्पष्ट होगया। कारण तुम्हारी समाज में भगवान की प्रतिमा जी के ऊपर शुद्र पुष्प तो चढ़ाते ही हैं फिर उनके मन्दिर में आने के वास्ते आन्दोलन करना कितनी भूल की वात है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सो यह बात हमारे यहाँ जायज नहीं मानी जाती के शूद्र हमारे यहाँ भगवान की प्रतिमा को छू सकता है। इसलिये यह प्रमाण भी हमारे जैन धर्म में लागू नहीं होता।

रहा निर्वाणकांड की गाथा का, सो सुनो देव लोग पुष्प बृष्टि करते हैं जैसे वर्षा समय पानी बरसने लग जावे और मुनि चोगाने में बैठे हों तो क्या डरकर भाग जावें, कदापि नहीं याते यह प्रमाण सिद्धान्त रूप से हमारे जैन धर्म में लागू नहीं होता। विचारो मुनिराज भोजन को जावें और रास्ते में पानी बरसने लग जावे तो क्या मुनिराज भाग कर किसी घर में घुस जायेंगे। हरगिज नहीं, वह उपसर्ग समझकर वहीं बैठ जावेंगे वह अपनी वीरता को त्रिकाल में भी नहीं छिपावेंगे और उपसर्ग से नहीं हटेंगे यह हमारा धर्म है। इसलिये जो तुमने प्रमाण पेश करते हैं सो सब धर्म से विरुद्ध हैं। अब हम कहते हैं सुनो—

हमने पहिले ऊपर भगवान कुन्दकुन्द स्वामी के अष्ट पाहुड़ के बोध पाहुड़ की गाथा न० ५५ तथा सूत्र पाहुड़ की गाथा १७ में तथा क्रियाकलाप नाम के ग्रन्थ के १०६ वें पेज की १४वीं लाइन में पं० पन्ना लाल जी सोनी कहते हैं कि बाल के क्रोड़वें भाग भी पर पदार्थ होवे तब परिग्रहधारी कहलावे सो भगवान तो पूर्ण वीतरागी हैं न वे भोगी हैं न कामी हैं न सरागी हैं फिर उनके केशर और पुष्पों के भोग विलास से क्या काम ?

हे भव्य जीव हो विचारो तो सही क्या बिलकुल ही विवेक खो दिया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस प्रकार की विषयों की सामग्री तो गृहस्थ लोग भोगियों को चहिये। सो इन महापुरुषों वीतराग जोगियों के ऊपर लाद दी।

उमास्वामी श्रावकाचार में इस प्रकार कथन है—

श्री चन्दनं विना नैव, पूजां कुर्यात्कदाचन ।
प्रभाते घनसारस्य पूजा कार्या विचक्षणैः ॥१२५॥
गंधधूपाक्षस्त्रग्भिः प्रदीपफलवारिभिः ।
प्रातः कलेप्युपचितिर्विधेया श्रीजिनेशिनः ॥१२८॥
पद्मचम्पकजात्यादिस्त्रग्भिः संपूजयेज्जिनान् ।
पुष्पाभावे प्रकुर्वीत पीताक्षतभवैः समैः ॥१२९॥
नैवं पुष्पं द्विधाकुर्यात्.न छिंद्यात्कलिकामपि ।
चम्पकोत्पलभेदेन यतिहत्यासमं फलम् ।१३०।

अर्थ—श्री जिनेन्द्रदेव की पूजा विना चन्दन के कभी नहीं करनी चाहिये ॥ १२५॥

प्रातःकाल के समय जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फल और अर्घ इन आठों द्रव्यों से भगवान जिनेन्द्रदेव की पूजा करना चाहिये ॥१२८॥

कमल, चम्पा, चमेली आदि पुष्पों से भगवान की पूजा करनी चाहिये। तथा पुष्पों के अभाव में अक्षतों को केशर से पीले कर और उन्हें पुष्प मानकर उनसे पूजा करना चाहिये। ।१२९।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुष्प के दो टुकड़े कभी नहीं करने चाहिये। तथा कली को तोड़ना भी नहीं चाहिये। चम्पा, कमल आदि पुष्पों की कली के दो टुकड़े करने से यति (मुनि) हत्या के समान दोष होता है। पूजा करने के लिये यह कथन है।

प्रातरेव विधातव्या, चन्दनपूजा जिनेशस्य।
सकलकलिलहंत्री स्वर्गसुखप्रदात्रीच ॥

अर्थ—भगवान जिनेन्द्रदेव की प्रातःकालिक पूजा चन्दन से ही करनी चाहिये। यह प्रातःकाल की चन्दन पूजा समस्त पापों का नाश करने वाली है और स्वर्ग सुख को देने वाली है।

खयाल कीजिये अबतो आपके गले उतरी कि चन्दन से पूजा करना तो सब मानते हैं ऐसे ही हमारे वीसपंथी भाई भी मानते हैं। कारण यह ग्रन्थ पूर्ण रीति से वीसपंथ आम्नाका ही है, न कि तेरह पंथ आम्नायियोंका।

इसमें १३० वें श्लोक में पुष्प की कली धोते समय टूट जावे तो यती (मुनि) मारने की हिंसा (हत्या) लिखी है सो आपने देखी।

नेमीचन्द प्रतिष्ठापाठ को खोल कर देखिये उसमें तो गजब कर दिया यहां तक कि भगवान जिनेन्द्रदेव की गोमय से आरती और गऊमूत्र से प्रक्षाल करना लिख मारा है। सुधर्म-श्रावकाचार चर्चासागर में भी कथन है खोल कर देखा।

प्रश्न—देवसेन आचार्य ने भावसंग्रह ग्रन्थ बनाया है वो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आचार्य तो मूल संघ के आचार्य थे, आप मानते ही हैं। उन्होंने भगवान कुन्दकुन्द को नमस्कार किया है।

जइ पउमणंहिक्षणाहो सीमंधरसामि दिव्वणाणेण।
ण विवोहइ तो समणा कहं सुमग्गं पयाणंति ॥४३॥

अर्थ—इस प्रकार के आचार्यों का भी कथन है फिर क्यों-कर न माना जावे ?

उत्तर—सुनो ऐसे ऐसे महापुरुषों के नाम का आश्रय ले ले कर ही तो पोप लीला उन्मार्ग फैलाया जाता है। इसलिए हम किसे मान लेवें ? नाम से ही कि यह मूल संघ वाले थे। ऊँची दुकान फीके पकवान वाली कहावत हो रही है। अतः इस प्रकार के धोके भरे नामों से सावधान रहें। मूल संघ आम्नाय और निवृत्ति मार्ग तथा अहिंसा अपरिग्रहवाद से जो भी कथन व आचरण मिलेगा वो हमारा है। अन्यथा सब ही बात निषेध करने योग्य है।

प्रश्न—हमारे यहां तो भगवान के वास्ते श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन स्वामी के सिर पर मुकट लगाना तथा गले में पुष्पों का हार पहिराना लिखा है और उनका फल स्वर्ग के भोगों की प्राप्ति बतलाई ऐसा मनोमतिखण्डन शास्त्र पाठ ३४ ओली नं० १० में लिखा है। आपको देखना हो तो देख सकते हैं।

उत्तर—तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। हम तो जानते हैं कि मुनि और आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक, क्षुल्लिका या ब्रह्मचारी और

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ब्रह्मचारिणीयें हैं सो सब ही शिथिलता पर उतर गये उन्हें पक्ष का मोह हो गया है जिससे धर्म नहीं हो जाता। देखिये व्रत कथा कोष में आर्मिकाजी का उपदेश—

शुक्लश्रावणमासस्य सप्तमी दिवसेर्हतां।
स्नपनं पूजनं कृत्वा भक्तयाष्टविधमूर्जितम् ॥१॥
मध्यतेमुकटं मुर्ध्निरचितं कुसुमा च करैः।
कन्ठश्रीवृषभेशस्य पुष्पमाला चा ध्रीयते ॥२॥

इन दोनों श्लोकों का अर्थ हम ऊपर बता चुके। आगे और भी एक भयानक कथा आपको सुनाते हैं जिससे तुम्हें अचम्भा हो जावेगा। मनोमती खन्डन नामा ग्रन्थ में दुग्धाद्वादशी नामा-व्रत में लिखा है कि एक तपेला में दुग्ध इतना भर दो जिसके अन्दर जिनेन्द्रदेव की प्रतिमा जी को डुबो देवे सो रात भर वो प्रतिमा जी उसी तपेले में डूबी रहे। फिर दूसरे दिन प्रतिमा जी को दुग्ध के तपेले से निकालो, हे भाइयो समझो आप लोगों ने भगवान की प्रतिमा जी को भगवान समझा ही नहीं। तुमने तो उसको पाषाण की प्रतिमा समझ कर दुग्ध में डुबो दिया। अगर आप उस प्रतिम जी को भगवान की समझते तो दुग्ध में हरगिज भी नहीं डुबोते। देखो अंजना ने पहले भव में भगवान की प्रतिमा को बाईस घड़ी बावड़ी के जल में रख दिया था उसके पाप के फल से अंजना को २२ वर्ष तक पवनंजय के सम्बध का वियोग रहा। तो ये रात भर प्रतिमा जी को दुग्ध में ढिवो कर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रखते हैं इनको न मालूम कौन से पाप का बंध होगा और नरक में जायंगे ।

प्रश्न—देखो अंजना सुन्दरी ने तो पाप बुद्धि (यानी द्वेषता) कर ये कार्य किया था, जिससे पाप बंध हुआ । यहां तो धर्म भावना से करते हैं फिर पाप बंध कैसे होगा ?

उत्तर—यदि कोई मनुष्य किसी राजा को प्रमाद में दो चाटे लगा देवे तो उसको सजा होगी या इनाम मिलेगा । विचारो हरगिज भी उसका वचना नहीं होगा, उसको सजा अवश्य मिलेगी वैसे ही इन पूजक लोगों की दशा होने वाली है । पीछे बैठकर रोना (पछताना) होगा । जब उदय आयेगा स्थिति और अनुभाग का, अभी मान वड़ाई में लग कर हंसलो फिर पछताना पड़ेगा ।

मनोमती खण्डन पान १० लीटी १८ वीं में ऐसा कहते हैं कि भगवान की प्रतिमा जी के शिर पर तिलक करना चाहिये, धन्य है श्रावको तुमारी बीतरागता पर । आगे और इस ही ग्रन्थ के १५व पेज में लिटी नं० ६ में लिखा है—

ब्रह्मघ्नोथवागोघ्नो वा तस्करो सर्वपाप कृत् ।
जिनांघ्रिगंधसम्पर्कान् मुक्तो भवति तत्क्षणे ।१

अर्थ—जो ब्रह्म घाती तथा गौ घाती तथा तस्कर तथा सर्वपाप को करिवे वालो पुरुष जिनेन्द्र के चरण सू मिल्यो थको गंध आपके लगावे है तो ताके पूर्वोक्त सर्वपातक तत्क्षण में छूट जाये है, यातें परम पवित्र है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे श्रावको ! देखो कितनी सरलता बतलाई है कि ब्रह्म कहिये आत्मघाती तथा गायघाती चोर महापापी भी हो यदि श्री जिनेन्द्र के चरण से मिले हुए चंदन को अपने सिर पर लगालेवे तो तत्त्वण सर्व पाप नाश हो जाते हैं। देखो यह कितना सरल उपाय बताया है। धन्य है भगवान इस तरण तारण धर्म को। संसार में पापी और महापापी को इस चंदन से धर्मात्मा यानि शीघ्रातिशीघ्र मोक्ष मिल जावेगी ! मुनिव्रत या संयम लेने की कोई जरूरत ही नहीं रही। चंदन लगाने से ही लोग अब नीचता को छोड़कर उत्तम बन जावेंगे। लगाओ भाई। इस चन्दन को, जिससे कोई भी जीव अब संसार में पापी रहेगा ही नहीं। धन्य है तुमारे धर्म की महिमा को।

भगवान की प्रतिमा निरावरण ही होती है—

जिनवरमएणजोईझाणे झाएइ सुद्धमप्पाणं
जेण लहइ णिवाणं ण लहइ किंतेण सुरलोयं ॥२०॥

टीका—जिनवर मतेन जिनशासनेन सम्यक्त्वश्रद्धान ज्ञानानुभवनलक्षणेन रत्नत्रयेण योगी दिगम्बरो मुनिः शुद्धं रागद्वेषमोहादिरहितं कर्ममलकलंकरहितं टंकोत्कीर्णं स्फटिकमणि विम्बसदृशं।

जइ जाद रूपसरिसो तिलतुसमेत ण गहदि हत्थयेसु।
जइलेइ अप्प बहुयं ततोपुरण जाइ णिग्गोदं ।१८।सूत्रपाहुड़

टीका—यथा जात रूपः सर्वज्ञवीतरागस्तस्यरूपसदृशो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नग्नशरीरः। तिलस्यपितृप्रियकणस्य तुषस्त्वङ्गयात्रं न गृह्णाति हस्तयोरित्युत्सर्ग-याख्यानप्रमाणमेव ॥ १८ ॥

जस्स परिग्गहगहणं अप्पं वहुयं च हवइ लिंगस्स ।
सोगरहिउ जिण वयणे परिगह रहीयो नीरायारो ॥१९
॥ सूत्रपाहुड़ ॥

टीका—यस्य मुनेः श्वेताम्बरादेः परिग्रहग्रहणं शासने भवति। अल्पं बहुलं चतुर्विंशत्यावरणादिकं भवति लिंगस्य ते जिनमार्गविहितः तल्लिंगं वेषो निन्दितोऽप्रशंसनीयो भवति ।१९।

हिन्दी टीका—वाल के अग्रभाग की कोटि कहिये अणिमात्र भी परिग्रह साधु के ग्रहण नहीं होय है ॥ १७ ॥

जैसे मुनि है सो यथा जात रूप होय है। जैसे जन्मता बालक नग्न रूप है सो ही दिगम्बर कहलावे है। सो अपने हस्त विषें व पांव से तिलतुष मात्र भी कछु ग्रहण नहीं करे। जो कुछ अल्प बहुत ग्रहण करे तो निगोद जावे, ऐसी प्रतिमा होय है ।१८।

जिस लिंग में तथा वेष में अल्प वा बहुत परिग्रह का ग्रहण होय सो धर्मात्माओं से गर्हित है। जिनमत में तो परिग्रह रहित निरागार ही मुनि कहलाते हैं ॥ १९ ॥

त्वमसि सुरासुरमहीतो ग्रन्थीक सत्वाशयप्रणामामहीतः ।
लोकत्रयपरमहीतोजनावरणाज्योतीरुज्वलद्धमहीतः ।१३९
बृहद्स्वयंभूस्तोत्र

अर्थ—हे वीर भगवन् ? आप सुरासुरों से वंदित

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

और तीन लोक के हित कारक निरावरण परिग्रह रहित उज्जल प्रकाशमान ज्योति सहित पूज्य हो।

णग्गत्तणं अकज्जं भावणारहीय जीणेहिं पण्णात्तं ॥५५॥

भावप्राभृत

टीका—नग्नत्वं सर्वं वाह्यपरिग्रहरहितत्वम् अकार्यं सर्वं कर्मक्षयलक्षणे मोक्षकर्ये रहितं। अतः सर्वं परिग्रहहिरतं हि स्फुटं मोक्षमार्ग भवती इत्यर्थः।

देहादि संगरहिओ ॥ ५६ ॥ भावप्राभृत

टीका—संगानां चेतनाचेतन बहिरंगान्तङ्गपरिग्रहाणां ते देहादि संगा।

णिग्गंथा णिस्संगा णिम्मा णासा णिद्धोसा।
णिम्मं णिरहंकारा पव्वज्जा एरिसा भणिया ॥ ४९

बोधपाहुड

टीका—सर्वपरिग्रहरहिता निस्संगदेहः सः पूज्यः।

णिणेहा णिल्लोहा णिम्मोहा णिव्वियार णिक्कलुसा।
णिब्भयणिरासभावा पव्वज्जा एरिसाभणिया। ५०।

बोधपाहुड

टीका—निःस्नेहा पुत्रकलत्रमित्रादिस्नेहरहिता अथवा तैलाद्यभ्यङ्गरहिता निःस्नेहा।

अर्थ—जब यहां तेल के भी संसर्ग की मनाई की है तो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कारण पायकर किस प्रकार केशर लगाई जावे। यदि केशर लगाई जावे तो वह प्रतिमा शास्त्रकारों ने परिग्रह सहित अवंदनीय मानी है। और भी कहा है—

अकिञ्चनोऽहमित्यास्व त्रैलोक्याधिपतिर्भवे।
योगिगम्यं तव प्रोक्तं रहस्यं परमात्मनः ॥ ११० ॥

आत्मानुशासन

अर्थ—संसार के जितने भी जड़ पदार्थ हैं सो सब मेरी आत्मा से भिन्न हैं। और मैं ही सर्व संसार का अधिपात (परमात्मा) ईश्वर हूं। इस प्रकार की भावना से तू (अहं) अर्हंत हो जावेगा ऐसा स्वरुप निरावरण परमात्मा का होता है सो योगियों के गम्य हुआ करता है। आगे कहा है—

आरम्भेणत्थि दया महिला संगएण णासायवँभं।
कँाए सम्मत्तं पव्वज्ञा अत्थगहणेण ॥

अर्थ आरम्भ में रंचमात्र भी दया नहीं होती, न स्त्रियों के सम्वन्ध से राग छूटता है। इस कारण राग द्वेष से मुक्त निरावरण बिना भूषा ही दीक्षा वाला प्राणि मोक्ष को प्राप्त करता है। जिनमत में जिस प्रतिमा में वाह्य और अभ्यन्तर दोनों प्रकार के परिग्रह में से कोई भी परिग्रह न पाया जावे वही प्रतिमाजी पूज्य है। यदि परिग्रह सहित भी पूज्य होती तो मुनिव्रत धारण करने की आवश्यकता ही नहीं होती।

सख देव अष्टक सिद्धान्त सार में लिखा है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सहज परम कायः विगत जननं दोषा ॥३॥
त्यजतमलकलंको धौत ससारपङ्क ॥४॥

अर्थ—जिनकी जन्मते बालक जैसी काय है, जिन्होंने संसार रूपी वेष भूषा आभरणों को छोड़ दिया है और जिन्होंने संसार रूपी भावनाओं को धो डाला है तथा जिन्होंने आवरण वेष भूषा अलंकार एवं संसारी जीवों का साथ सर्वथा त्याग दिया है, ऐसे निर्मल पवित्र भगवान का स्वरुप ही वंदने योग्य है, अन्यथा नहीं ।

धमरसापण सिद्धान्तसार में लिखा है—

णिव्भूसणो वि सोहइ कोहोए पमओमणोणत्थि ।
विपार रहिओ णिरंबरो मणोहरो तह्मा ॥१२३॥
णिग्गंथ मोहमुक्का ॥८०॥ मोक्ष पाहुड ।

अर्थ—जो मुनी निर्ग्रन्थ अन्तरंग और वाह्र परिग्रह से रहित है वह ही आकृति जिन प्रतिमा की पूज्य मानी है ।
भगवान कुंदकुंद अष्ट पाहुड़ अंतर्गत बोधपाहुड़ में लिखते हैं ।

सपराजंगम देहा दंसण णाणेण शुद्ध चरणणं ।
णिग्गंथ वीयराया जिणमग्गे एरिसा पडिमा ॥१०॥

अर्थ—दर्शन ज्ञान करि शुद्ध है निर्मल है चारित्र जिनके तिनकी स्वपरा कहिये अपनी तथा पर की चालती देह है सो जिन जिन मार्ग विषें जंगम प्रतिमा मानी है । अथवा स्व कहिये

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आत्मा ते पर कहिये भिन्न है ऐसी देह सो कैसी है। निर्ग्रन्थ स्वरूप है जाकै कछु परिग्रह का लेश नाहीं है, सोही दिगम्बर मुद्रा मान्य है।

शुभचंद्र आचार्य ज्ञानार्णव में बतलाते हैं—

निःशेषभवसंभूतं क्लेशद्रुमताशनं।
शुद्धमत्यन्तनिर्लेपो ज्ञानराज प्रतिष्ठते ॥३१॥ ॥२४॥
निर्लेपो निःष्फलः शुद्धो नष्पिन्नोऽत्यन्त निवृ ॅतः।
निर्विकल्पश्च शुद्धात्मा परमात्मेतीवर्णितः ॥३८॥ ॥८॥

अर्थ—जो सम्पूर्ण संसार में अनेक पर्यायों में उत्पन्न किये हुए कर्मों को एवं क्लेश रूपी वृक्षों को दग्ध करने वाला अग्नि रूप शुद्ध अत्यन्त निर्लेप ज्ञान साम्राज्य अर्थात् शर्वज्ञता पर निर्लेप निकल शुद्ध अत्यन्त निवृ ॅत निर्विकल्प और शुद्धात्मा होकर स्थित हो उसे परमात्मा कहते हैं। तात्पर्य यह है कि यहाँ पर भी भगवान को निर्लेप बतलाया है।

सहस्रनाम में भी १००८ नामों में निर्लेप लिखा है।

व्योममूर्तिरमूर्तात्मा नीर्लेपो ऽमल लोचनः॥

उल्लिखित अनेक प्रमाणों से भगवान परिग्रह रहित और निर्लेप हैं यह सिद्ध किया जा चुका। अतः भगवान के ऊपर केशर का लेप आगम विरुद्ध समझकर नहीं करना चाहिये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आगे और भी बोधपाहुड़ में कहते हैं—

जीणबिंबं णाणमयं संजमसुद्धं सुवीय च।
जं देइ दीक्ख सिक्खा कम्मक्खय कारने सुद्धा ॥१६॥
णिग्गंथे जीणमग्गे संखेवणो जहा खादं ॥२६॥

अर्थ—जिनबिंब कैसा है ज्ञानमयी संयमकरशिुद्ध है और अतिशय करि वीतराग तथा कर्म क्षय का कारण शुद्ध जिनमत में बालक तुल दीक्षा शिक्षा होय है।

जिन प्रतिमा निर्गन्थ रूप होय है। जामें बाह्य और अभ्यन्तर परिग्रह लेशमात्र नाहीं सो ही पूज्य होय है ॥५६॥

आदिपुराण पर्व २३ श्लोक नम्बर १०७ में लिखा है कि

पुरोऽङ्गवल्यातने भूमिभागे,
सुरेन्द्रोपनीताबभौ सासपर्या।
शुचिद्रव्य संपज्जसमस्तैव भर्तुः,
पादोपास्तिमिच्छुः श्रीतातच्छलेन ॥

अर्थ—सुरेन्द्रनिकर कल्याण पूजा का द्रव्य जो सो श्रीजिनेन्द्र भगवान के चरण कमल के पास रंगावली की भाँति भूमि के भाग विषें चढ़ाया गया ॥१०७॥

निष्कर्ष—यहां पर जो चरणों पर केशर पुष्प चढ़ाना होता तो इन्द्र जो पूजन का दव्य लाया था उसमें केशर, पुष्प जरूर लाया और उसको पृथ्वी पर रङ्गावली के समान क्षेपण किया। यदि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऐसा नहीं होना तो चरणों पर चढ़ाता। परन्तु ऐसा नहीं होता था इसलिये पृथ्वी पर चढ़ाया। क्योंकि वीतराग को सराग बनाने के बराबर अन्य पाप नहीं हैं। इसलिये देवों ने सामग्री चरणों के पास ही चढ़ाई।

एकीभाव स्तोत्र में लिखा है कि—

आहार्येभ्यः स्पृहयति परोः स्वभावदहृद्यय: ।
शस्त्रग्राही भवति सततं वैरिणाँ यश्च शक्यः ॥
सर्वांगेषु स्वमसि सुभगस्त्वं न शक्यः परेषां ।
तत्किं भूषावसनकुसुमैकिंः च शस्त्रैरुदस्त्रैः ॥१६॥

अर्थ—हे भगवान आप सिवाय अन्य देव दानव स्वभावतः अमनोज्ञ हैं सो गन्धमाल आभूषणादि कर मनोज्ञपणो वांछे हैं। और जो वैरीन करिशक्य है मो निरन्तर शस्त्र गृहण कर ही रहे हैं। और तुम सर्वाङ्ग के विषय (मनोज्ञ) हो तो तथा तुम शत्रुनिके शक्य नहीं हो ताते तिहाते गन्ध लेपनादि आभूषणनिकरि तथा वस्त्र कुसुम करि कहा प्रयोजन तथा शस्त्रनिकर कर कहा प्रयोजन। आगे चैत्य भक्ति में कहते हैं—

विगतायुध विक्रिया विभूषा, प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणां प्रतिमाः प्रतिमागृहेषु कान्त्यां प्रतिमाःकल्म शान्तयेऽभिवंदे ॥१३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निराभरणभासुरं विगतवेगोदयात्,
निरंबरमनोहरप्रकृतिरूपनिर्दोषतः।
निरायुधं सुनिर्भयं विगतहिंस्यहिंसाक्रमात्,
निरामिष सुतृप्तिमद्विविधवेदनानाम् ॥३२॥

अर्थ—जो निर्द्वन्द्व है, जिन्होंने घातिया कर्मों को भी नाश कर दिया है ऐसे परमात्मा जिनेन्द्र भगवान के किसी प्रकार के कर्म मन कलंक नहीं ऐसे भगवान की प्रतिमा जी पर केशर और पुष्प तथा मुकुट हार माला पहिराना कितनी भूल की बात है ॥१३॥

जिस मुनि ने निराभरण होकर ध्यान किया और आत्म स्वभाव की शक्ति के नियम से घातिया कर्मों का नाश कर तथा रागादिक उपपादि भावों को अपनी आत्मा से सदा के लिये पृथक् कर लिया है। उस परमात्मा की प्रतिमा जी पर आवरण चढ़ाना कितना जबरदस्त मिथ्यात्वकर्म का तीव्रबन्ध का उदय हैं। इस ही को तो गृहीत मिथ्यात्वी कहते हैं फिर भी आप वीतरागी बनना चाहते हैं। आगे और भी कवि लोग कहते हैं—

दोहा

देव देव सबही कहे, देव न जाने कोय।
लेप पुष्प अरु केवड़ा, कामी जन के होय ॥१॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिन प्रतिमा जिन सारखी, हो निश्चय निरधार।
गन्ध पुष्प अरु केवड़ा लागे नहीं अगार ॥२॥

जिन जिनप्रतिमा में भेद ना, अन्तर बाहिर शुद्ध।
पुष्प लेप अरु केवड़ा ये प्रत्यक्ष विरुद्ध ॥३॥

एक देश चारित विषें, त्यागे सब सिंगार।
गन्ध पुष्प अरु केवड़ा, छीवे नहीं लगार ॥४॥

यथाख्यात चारित्र मय, तिनकी प्रतिमा सार।
तिनके लेपजु केवड़ा शोभे नहिं सिंगार ॥५॥

देव जिनागम ने कह्या तामें दोष न लेश।
लेप पुष्प में दोष बहु, कैसे होय प्रवेश ॥६॥

होवे देव सरागी जो पावै दोष अपार।
पुष्पमाल अरु केवड़ा, राखे सब सिंगार ॥७॥

वीतराग ही देव है, रागी होत कुदेव।
राग सहित को त्यागकर, वीतराग कर सेव ॥८॥

सवैया इकतीसा

वीतराग देवजी के बिम्ब पै लगावे कोउ,
कुंकुमादि लेप अरु केवड़ा विकार जू।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ताके दृढ़ बन्ध होय कोड़ाकोड़ी सत्तरिको,
नरक निगोद महिं पावे दुःख भारजू ॥
तहतें निकसि पुनि सिंह सर्प बाज होंय,
हिंसाकर फेरहू नरक पद धारजू ।
तातें जिन बिम्वापाय दोष न लगाओं कोहु,
दोष जो लगावे ताके कष्ट को न पारजू ॥

एक समय श्री अकलंक निकलंक दोनों भाई बौद्धों की पाठशाला में पढ़ते थे। उस समय पर एक संकट आया तब उन्होंने प्रतिमा के ऊपर एक सूत का धागा डालकर प्रतिमा जी को उलांघा। देखो जरा से धागे के निमित्त से हमारी प्रतिमा जी की पूज्यता बनी रहेगी कदापि नहीं रहेगी। आगे कहते हैं—

सवैया इकतीसा

केई मूड़मती फूल केवड़ा न सराग कहै,
केशरादिलेपसुसराग न ठहरावे है।
सोतो जिनमत सो प्रत्यक्ष ही विरुद्ध जानो,
रागी केसे लेपको विरागी के ठहरावे हैं ॥
छद्मस्त ज्ञान मुनिराज के लेप किए,
भोजन को त्याग फिर बन को सीध्यावे हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कैसे सर्वज्ञ वीतराग जी के लागे लेप,
पक्ष की हटा हटी मन मानी गावे हैं ॥१॥

सवैया ३१ सा

कोई महामानी शठ, विम्ब के पहिराय माल,
ताहू को निलाम कर करे निंद काम है ।
जेते जन तहां होय, तेते वच कहे लेय,
इतने रुपये देवे माला सही ठाम है ।
तिन माहि एकलेय, उत्कृष्ट रुपे देय,
शेष धन राख लेय निरमायज दाम है ।
ऐसे परपंच धरे, विम्ब की अवज्ञा करे,
ताहि फल सेती पाए नर्क दुःख धाम है ॥१॥

बृहत्सामायिक पाठ में अमिगति आचार्य कहते हैं—

द्युतिमंडल भासुरोगयष्टी भवनेषु त्रिषुभूतये प्रवृत्ता—
वपुषा प्रतिभा जिनोत्तमानां, प्रतिमा प्राजलिरस्मिवंदमान
विगतायुधविक्रिया विभूषा प्रकृतस्थाःकृतिनां जिनेश्वराणां
प्रतिमाप्रतिमा गृहेषु कांत्या प्रतिमाकल्मषशांतयेऽभिवन्दे २

अर्थ—द्युतिमंडलसे भासुर(देदीप्यमान) है ।अंगयष्टि जिसकी और तीन लोक में प्राणी को उपकार निमित्त प्रवर्तने वाले

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिनोत्तम हैं उनके शरीर के समान प्रतिमा को अञ्जुलि सहित वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥

और आयुधविक्रिया विभूषा रहित निज स्वभाव में तिष्ठती कृति जिनेश्वर की क्रांति के समान प्रतिमा गृह में पाप की शांति के लिये सर्व तरफ के वन्दना करता हूँ, तथा मन, वचन, काय और कृतकारित अनुमोदना से नमस्कार करता हूँ।

इस प्रकार के वचन से जिनेन्द्र के शरीर के समान प्रतिमा को जान आयुध विक्रिया विभूषा रहित रखकर ही पूजन स्तवन करना योग्य है।

सावरण का निषेध सवैया ३१ सा

सरावर्ण पूजै नाहीं सुरपति नरपति,
सरावर्ण पूजै नाहीं खगनागपति जू।
सरावर्ण पूजै नाहीं गणधर मुनिराज,
सरावर्ण पूजै नाहीं जाकी भली मति जू ॥
काल दोष पाय जिन बिम्ब पहिराय माल,
केवरा वगल धरि लेप गंध सजी हैं।
ऐसी विधि परपंच रचिके सराग चिन्ह,
तोको पूजि मूढ़ कहे हग समकिती हैं॥१॥

मूलाचार मूलगुण अधिकार की गाथा नम्बर ३० की टीका में—

णिभूषणं-भूषणानि कटककेयूरहारमुकुटाद्याभरण-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मंडनविलेपनधूपनादीनि तेभ्यो निर्गतं निर्भूषणं सर्व-रागांगविकारभावः ।

अर्थ—यह अचेलक धर्म निर्भूषण, कड़े, केयूर, हार, मुकट आदि आभरण तथा विलेपन कहिये केशर पुष्प गंध माला धूप आदि क्रियाओं से रहित ही निर्ग्रन्थपणों बतावे हैं । इसके अलावा पूज्यता रहती ही नहीं । कारण संयम की विनाशता में पूज्यता कहां ?

प्रश्न—जो जो बातें आपने बतलाई वो वो मानने योग्य हैं, परन्तु करें क्या समाज में आज इस प्रकार की उच्छृंलता बढ़ी हुई है उसका स्वरूप और समझाइये । १—जैसे रात्रि में पूजन करना । २—बैठकर पूजन करना । ३—गाय की पूंछ के वालों का चमर करना । ४—आरती करना ।

उत्तर—आपने बहुत अच्छे प्रश्न किये । इनका उत्तर इस प्रकार है सो सुनो ।

१—रात्रि में पूजन करने के लिये तुम कहते हो सो ठीक परन्तु सिद्धान्त तो बिलकुल रोकता है सोही यहाँ बताते हैं—

अमितगति श्रावकाचार अध्याय ५ श्लोक ४१ में लिखा है—

यत्र नास्ति यतिवर्गसंगमो, यत्रनास्ति गुरुदेवपूजनम् ।
तत्र दोषनिलये दिनात्यये, धर्मकर्मकुशला न भुंजते ॥

अर्थ—जिस रात्रि समय में यतिवर्ग (संयमी वर्ग) का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सम्बन्ध नहीं होता ऐसी रात्रि विषें गुरुओं की तथा देवों की पूजा करना मना है। देखो जैन धर्म के अलावा वैष्णव धर्म में गोसांई तुलसीदास जी रामायण के सुन्दर काण्ड में कहते हैं—

चौपाई

लंका निश्चरनिकर निवासा।
यहां कहां सज्जन कर वासा॥

अर्थ—लंकापुरी में राक्षसों का वास है। राक्षस कैसे होते हैं जो निश्चर कहिये रात्रि में खाने वाले। ऐसी रात्रि में अन्यधर्मी भी अपना आचरण करते डरते हैं। और जो अहिंसक कहलाने वाले जैनी भगवान जिनेन्द्र देव की पूजन का आरम्भ करें, उन्हें जैनी अहिंसक कैसे कहा जावे? प्रत्यक्ष धर्म विरुद्ध है।

इसलाम धर्म में भी ऐसा ही कहा है। महात्मा फकीर साहब ईसूफ फरमाते हैं—

रात्रि में खाना खूदाफमाता नहीं।
हिंसा हो जायगी तुमारा काम नहीं॥१॥
कयामत की टाईम पर हिसाब लिया जायेगा।
गफलत न करो सजावर हो जायेगा॥२॥

मार्कंडेय पुराण में वैष्णव सम्प्रदाय वाले कहते हैं—

अस्तंगते दिवानाथे, आपो रुधिरमुच्यते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहने का मतलब यह है कि पानी को रात्रि समय में रुधिर तुल्य बतलाया हैं। फिर जैनियों का धर्म तो बहुत ऊँचा है। जब अन्य धर्म वाले भी पानी को रुधिर के समान समझते हैं तब जैनी लोग रात्रि में पानी को कैसे पूजा में लावेंगे और पूजन पानी बिना होता नहीं। तातें रात्रि में जैनी लोग हरगिज भी पूजन नहीं कर सकते।

२–भगवान की पूजन बैठकर करना चाहिये या खड़े होकर इस बारे में सिद्धान्त क्या कहता हैं?

उत्थाय तुष्टवा सुरेन्द्राः स्वहस्तैः जिनस्यांघ्रपूजां प्रचक्रुः प्रतीताः

अर्थ—देवेन्द्र लोग भी अपने हाथ से खड़े होकर ही पूजन करते हैं। यहां पर उत्थाय शब्द दिया है इसलिये पूजन खड़े होकर ही करना सिद्धान्त है। उत्थाय का नाम ही तो खड़े होना है।

मुनि लोग भी तीर्थंकरों की स्तुति खड़े होकर ही करते हैं। सो ही मूलाचार में बतलाया है—

चउरंगुल तरपादो पडिले हिय अंजुली कपुयसत्थो।
अव्वाखितो वुत्ताकुणदि य चउवीसत्थयं भिक्खू ॥

श्री हजारीलाल जी सिघई कृत पूजन स्तवन में लिखा है—

चौपाई

गणधरदेव वक्तव्य इमगोत, अष्टद्रव्यतें पूजनहोत ॥१॥
ठाड़े ठाड़े पूजन करो, याते पाप सकल परिहरो ॥२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यहां भी खड़े होकर ही पूजन करना कहा है। पूजन और स्तवन में फर्क नहीं है।

उसहादि जिणवरणां णामणिरुत्तिं गुणाणु किं चिं चं।
कःउण अच्चिदूणयतिसुद्धपणमोथ ओणे ओ ॥ २४ ॥

अर्थ—ऋषभादि चौवीस तीर्थंकरों के नाम निरुक्ति के अनुसार असाधारण गुणों का प्रगट करना तथा मन वचन काय और योग की शुद्धता पूर्वक चरण युगलों की पूजन प्रणाम आदि करना चतुर्विंशतिस्तवन है।

भावार्थ—पूजन और स्तवन में शब्दादि से भेद मालूम होता है अर्थ से भेद नहीं है। पूजन तथा स्तवन करने के लिए भक्ति शक्ति एवं विनय की आवश्यकता है, बिना खड़े हुये उल्लिखित प्रशस्त भक्ति आदि नहीं बन सकती। अतः भगवान का पूजन आदि सामने खड़े रहकर ही करना चाहिये।

सामान्य मनुष्य जब आता है तब उसका उठकर ही आदर किया जाता है। जिसमें ये तो तरण तारण भगवान हैं सो बैठकर पूजन करना कैसे योग्य हो सकता है?

पूजा भगवान के सम्मुख ही होती है—

तेसिं अहिमुहदाए अत्था सिज्झंत्ति तहय भत्तिए।
तोभत्तिरागपुव्वं वुच्चए एदं णहु णिदाणं ॥७५॥

मूलाचार अ० ७

अर्थ—जो भव्य जीव भगवान के सम्मुख भक्ति एवं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राग पूर्वक गुणों का स्मरण करते हैं उन जीवों को वांछित फल की सिद्धि के साथ आत्म स्वभाव की सिद्धि होती है। इस गाथा में भगवान के सम्मुख खड़ा होना ही बताया है।

आरहिदूणं ते सुं गणहरदेवादि बारस गणाते।
कादूणं विप्पदाहि णमच्चंति सुमुहं णाहं ॥

तिलोयपण्णति अ० ४ गाथा ८७३

अर्थ—वे गणधर देवादिक बारह गण पीठों पर चढ़ कर और प्रदक्षिणा देकर जिनेन्द्रदेव के सम्मुख होते हुए पूजा करते हैं। सम्मुख ही पूजा करने वास्ते प्रमाण त्रिलोक सार में लिखा है—

दिव्यफल पुप्फ हत्था सत्थाभरण स चामराणीया।
बहुधयतुरायरावा गत्ता कुव्वंति कल्लाणं ॥६०५॥
पड़िवरसं आसाढ़ तहकत्तिय फग्गुणेय अट्ठमिदो।
पुण्ण दिणीति य भिक्खं दोद्धोपहरं तु ससुरेहिं ॥६७६॥
सोहम्मो ईसाणो चमरो वइरोयणो पदक्खिणदो।
पुव्व वर दक्खिणुत्तर दिसासु कुव्वंति कल्लाणं ॥६७७॥

अर्थ—दिव्यफल और पुष्पों को हाथ में लेकर प्रशस्त आभरणधारी चामर हाथ में लिये हुए सेना सहित बहुतसी ध्वजा युक्त वादित्रों शब्दों के साथ नन्दीश्वर द्वीप में जाकर जो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूजन करते हैं वो सर्वदा आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुण शुक्ला अष्टमी के दिन से पूर्णिमा तक प्रति वर्ष दिन के दो प्रहर पर्यन्त अपने २ देवों सहित करते हैं। सौधर्म, ईशान, चमर और वैरोचन चारों प्रदक्षिणा रूप पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर चारों दिशाओं मे पूजा करते हैं।

पुण्यास्रव कथा कोष में भी भगवान के सम्मुख पूजन करने का विधान मिलता है। गुवालने सम्मुख ही कमल चढ़ाया था।

स चाद्यं पीठमारूढ़स्त्रिपरीत्यकृताञ्जुलिः।
पूजाद्रव्यमुपानीय भक्त्या स्तौत्यभिमुखम् ॥ ३३ ॥

अर्थ—राजा श्रेणिक आद्य पीठ पर चढ़ कर और जिनेन्द्र भगवान की तीन प्रदक्षिणा देकर पूजन सम्बन्धी द्रव्य को चढ़ा कर भक्ति पूर्वक भगवान के सामने स्तुति करने लगा। यहां पर "अभिमुखम्" पाठ लिखा है यह पुस्तक हस्त लिखित है जो १७२३ सम्वत की है। मुद्रित प्रति में सन्मतिम् पाठ कर दिया है। चैत्यभक्ति छपी हुई पं० पन्नालाल जी साहब द्वारा जिसमें लिखा है।

अभिवन्दे अभिमुखी भूयस्तुवे ॥ पा० २८१ श्लोक १३ ॥

टीक—सदाभिमुखमेव यज्जगति पश्यताः पृ० २६१ श्लोक ३४(हितार्थे त्यादि)यद्रूपम् अभिमुखं समन्ता द्वावीक्ष्य विलोक्य) इस टीका में (सदा अभिमुखमेव यज्जगति-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

षश्यतां सर्वतः) सदासर्वदा अभिमुखमेव। कथं सर्वतः सर्वा सुदिक्षु यद्रूपं दृश्यते ।

इस प्रकार पूजन स्तवन, स्तुति, आराधना, भगवान जिनेन्द्र देव की सम्मुख ही हुआ करती है अन्यथा धर्म से विपरीत ही है। अतः पूजन खड़े होकर ही करना चाहिये ।

प्रश्न—क्या यह ठीक है भगवान और प्रतिमा जी में अतंर है ।

उत्तर—अमरकोष में इस तरह कहा है –

प्रतिमानं प्रतिविम्वं प्रतिमा प्रतियातना ।
प्रतिच्छायो प्रतिकृतिरर्चापुंसि प्रतिनिधिः ॥वर्ग१०श्लोक३६

अर्थ – प्रतिमान, प्रतिविम्व, प्रतिम, प्रतियातना, प्रतिच्छाया और प्रतिकृति तथा प्रतिनिधि, ये शब्द प्रतिमा वाची हैं । एवं भगवान को आकृति धारी मूर्ति को कहते हैं। इस पर श्रद्धान करो, गलती नहीं खाओ, गलती करने से कर्मबंध होगा ।

प्रश्न गौ के बालों के चँवर ढोरना चाहिये या नहीं ?

उत्तर–जैन समाज अपने जैन धर्म को अन्य धर्मों से उच्च समझते हैं । सो उसकी उच्चता का कारण एक अहिंसा ही है। जैन धर्म एक अहिंसा की मूर्ति है । जैनी लोग हृदय में भी कभी हिंसा के भाव नहीं लाते और न धर्म हिंसा रूप पदार्थों का समागम ही मिलाता। जैनाचार्यों का श्रावकों के लिये पानी भी छानने का उपदेश है सो भी दोहरे कपड़े के छन्ने से । क्यों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कि पानी में छोटे २ चलते फिरते त्रसकायिक जीव रहते हैं। इस कारण अहिंसा के पालक जैन लोग खाने पीने आदि जो कार्य करते उसमें विना छना पानी काम में हरगिज भी नहीं लेते। जैन लोग घर में भी ऐकेन्द्रिय जीवों पर दया ही करते हैं प्रमाद से सावधान होकर सदा अहिंसा पालन करने में तत्पर रहते हैं। तो फिर जैन लोग ऐसे धार्मिक होकर धर्म स्थान में मंदिर में किस प्रकार हिंसक पदार्थ चमर का प्रयोग करेंगे। कदापि नहीं। सोही यहां बताते हैं—

भट्टारक इन्द्रसैन जी कृत प्रबोधसार अध्याय २ में लिखा है—

चर्मास्थिमांसैः परीपूरिताः ये, धेनोश्चमर्याः खलुपुच्छकेशाः।
सुधार्मिकैःप्राज्ञजनैःकदापि, ग्रा ह्यं नते धर्मनिकेतनेषु ॥२१०

अर्थ—चमरी गाय के बालों का जो चमर बनाया जाता है। वह धर्मात्मा विद्वानों को धर्म स्थान में ग्रहण करने योग्य नहीं है। क्योंकि उस चमर के वास्ते गाय की पूंछ काटी जाती है। उस पूंछ से उस गाय को इतना प्रेम है,कि जब वह पूंछ कट जाती है तब वह गाय वहीं खड़ी रह जाती है। पश्चात् वहां पर कोई हिंसक जीव आजावे और उसको मार कर खा जाता है। अथवा वे पूंछ काटने वाले भी वहीं उसको मार डालते हैं। तो उस पूंछ में चमड़ी, हड्डी, मांस, रुधिर और केश (बाल) रहते हैं सो इनमें कोई भी वस्तु छीने योग्य नहीं है। ऐसे पदार्थ को जिनेन्द्र देव पर ढोरा जावे यह जैन धर्म की

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पवित्रता और अहिंसा के विरुध्द है। श्री जिनेन्द्रदेव को जब श्रावक स्पर्श करते हैं तब शुद्ध स्नान कर पवित्र कपड़े पहिन कर स्पर्श करते हैं तो विचारने योग्य वात है कि ऐसे अपवित्र घृणास्पद हिंसा से उत्पन्न उस चमर को अहिंसा के पूर्ण उपासक श्रावक श्री देवाधिदेव परम वीतराग के विम्ब के ऊपर कैसे ढोर सकते हैं।

अतः मूलसंघ आम्नाय वाले श्रावक लोग गाय के बालों के चमर को स्पर्श भी नहीं करते। वे तो शुद्ध गोटे के तथा चांदी के तारों के चमर बनवाय कर श्री मन्दिर जी में काम में लाते हैं। जिनके स्पर्श करने में शुद्धता और लौकिक उज्वलता तथा श्रावक धर्म की पूर्ण रूप से प्रशस्तता बनी रहे।

प्रश्न—भगवान समन्तभद्र स्वामी ने स्वयंभू स्तोत्र में इस तरह कहा है कि "सावद्यलेशो वहुपुन्यराशी" इसका क्या अर्थ करोगे तथा आज कल मन्दिरों में कच्चे चमड़े से मढ़े तबले व सारंगी का उपयोग करते हैं। एवं मुनि लोग मयूर पीछ रखते हैं। इसका क्या कारण सो कहिये?

उत्तर—तवला सरंगी कच्चे चमड़े से मंढे होते हैं। परन्तु वे जिनेन्द्रदेव से बहुत दूर रहते हैं स्पर्श नहीं करते और चमर भगवान के ढोरा जाता है।

मयूर पिच्छीके वारे में यह वात है कि आसोज मास में या कार्तिक मास में मयूर स्वय मोर पीछे को छोड़ देते हैं। नकि मयूर को मार कर मोर पीछ लिया जाता है। हां शरीर का अवयव

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जरूर है सो मुनि लोग इनको चौके में नहीं ले जाते।

अब रहा तुम्हारा सागद्यलेशो वहुपुण्यराशी, सो इसके वास्ते भी आचार्यों ने ऐसा कथन किया है

विमलपुराण अ० ४ में जयसिंह आचार्य कहते हैं कि—

देवधर्मतपस्विनां कार्ये महती सत्यपि।
जीवघातो न कर्तव्यः स्वभ्रपातकहेतुमान्॥ ११२॥

अर्थ—देव, धर्म और गुरुओं के निमित्त भी महान से महान कार्य पड़ने पर जीवघात नहीं करना चाहिये। क्योंकि जीवघात नरक में ले जाने का कारण है। जो इसकी परवाह नहीं करते वे जिनेन्द्र भगवान के वचन रूपी आंखों से रहित हैं।

प्रश्न—भगवान जिनेन्द्रदेव की रात्रि के समय हम दीपक लगाकर आरती करते हैं सो तो ठीक है न?

उत्तर—आरती करना जैन सिद्धान्त के अनुकूल नहीं है। आरती का समय तो गृहस्थियों (श्रावकों) के लिये सामायिक करने का समय है आरती के लिये रात को दीपक जलाना पड़ता है जो किसी भी तरह उचित नहीं है। सामायिक करने के कार्य को टाल कर उसको हिंसक आरती के काम में लाना शास्त्र से कभी सिद्ध नहीं होता। आरती के विषय में शास्त्रों में कहा गया है जैसा कि

भूपालस्तोत्र अध्याय ७ में लिखा है कि—

दीपप्रकाशे प्रयतन्तीजीवाः आर्तिकं दीप मृतेनभावी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तज्जवतान्नरकप्रसूति, ररार्तिकं नैव ततो विधेयम् ॥१०४
दीपप्रकाशव्यसनो हिं शलभाः दीपे पतन्तो वीरमन्ति नैव।
तज्जीवघातान्नरके प्रयान्ति, अरतिकं नैव दयालुध्येयम् ॥१०५

अर्थ—नियम से दीपक शिखा पर मच्छर और पतंगे आदि चतुरिन्द्रिय जीवों का घात होता है। मच्छर आदि प्रकाश के व्यसनी जीव हैं। वे आने से कभी नहीं रुकते, कारण उनका यह विषय है और मन नहीं है सा उपदेश से भी नहीं रुक सकते खयाल करो जीव घात से प्राणी नियम से नरक को जाता है और आरती बिना दीपक के बनती नही। अतः आरती करना कभी विज्ञ (विद्वान) यानि सभ्य (दयालु) पुरुषों का ध्येय नहीं हो सकता। यदि कहा जाय कि आरती में जीवघात होता है किंतु हम धर्म का कार्य करते है, हम जान कर जीव थोड़े ही मारते हैं। उनकी आयु कर्म के निमित्त से मरते हैं तो भाई ऐसा कहना ठीक नहीं, क्योंकि न हम आरती करते न जीव मरते। दीपक से जीव जरूर मरते हैं। इसलिये ऐसा कार्य करना जैनियों के लिये शोभा नहीं देता क्योंकि महापाप का कारण है। शास्त्रों में धर्म कार्य समझकर ऐसा पाप करना मना किया है। सो पहले भी बतलाया और यहाँ भी बतलाते हैं—

जटासिंहाचार्य कृत विमलपुराण अध्याय ४ लिखा है—

देवधर्मतपस्विनां कार्ये महति सत्यपि।
जीवघातो न कर्तव्यः श्वभ्रपातकहेतुमान् ॥११२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ—देव धर्म और गुरुओं के निमित्त यदि महान से महान भी कार्य करने पड़ें तो भी जीव घात न करना चाहिये। क्योंकि जीव घात नरक में ले जाने का कारण होता है। जो इस बात की परवाह नहीं करते वे जिनेन्द्र भगवान के वचन रूपी आँखों से रहित है।

प्रश्न—प्रतिमा जी की पूजन करना हो तब वेदी में से प्रतिमा जी उठाकर अन्य स्थान पर विराजमान करके पूजन करने में तो कोई दोष नहीं है?

उत्तर—सुनिये भगवान की जब प्रतिष्ठा कराई जाती है तब मुहुर्त देखा जाता है। इसके लिये वेदी प्रतिष्ठा कराई जाती है, विना मुहूर्त के भगवान विराजमान नहीं किये जाते। ऐसी प्रतिमा जी को उठा २ कर इधर उधर लिये फिरते तो क्या आपने प्रतिमा जी को बच्चों का खेल समझ लिया है। प्रतिमा जी की कोई कदर ही नहीं। इससे ऐसा पापबंध होगा सो भोगना पड़ेगा। शास्त्रों में भी ऐसा ही वर्णन है।

प्रतिमाजी को उठा २ कर खिलवाड़ मचादी है इसका पाप भोगने के समय में जीव दुख उठायेगा। अभी कोई कहने वाला नहीं और न यहाँ समझाने वाला है। यदि समझाने वाला है तो उसकी मानते नहीं इसलिये ऐसा पाप करने वालों के पाप भोगते ही मालूम पड़ेगी। अभी तो मान्यता या कषाय की पूर्ति के लिये कार्य करते हैं पर याद रखना पाप का फल भोगते समय रोना ही पड़ेगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—मंदिर जी में वेजीटेविल घी ले जाना ठीक है या नहीं ?

उत्तर—वेजीटेवल घी गृहस्थों के यहाँ ही वरतना नहीं चाहिये कारण ये घी अशुद्ध और अभक्ष है। ऐसा पदार्थ धर्म स्थान में प्रयोग लाना महा पाप बंध करने वाला है। मंदिर जी में एक घी का दीपक चाहिये ज्यादा नहीं जिससे दर्शक लोग दर्शन कर लेवें।

प्रश्न—यह प्रथा हमारी समाज में क्यों चालू हुई सो भी कहो।

उत्तर—अपनी समाज में भट्टारकों ने अन्याय किया। जिससे जैनी लोग अपने वालक भट्टारक वनाने को नहीं देते थे तव भट्टारक लोग रुपये दे दे कर ब्राह्मणों के बच्चों को भट्टारक वना लेते थे। तव उन ब्राह्मण भट्टारकों ने ब्राह्मणी धर्म इस जैन धर्म में चला दिया, क्योंकि पहले भट्टारकों की बहुत चलती थी कोई रोकने वाला नहीं, सव डरते थे। कारण यह जन्त्र मन्त्र ज्यादा किया करते थे। इसलिये इनसे डरना पड़ता था।

इन्हों ने ही तो समाज में उपवास में कुरली करना बतलाया। यह अभिप्राय दिगम्बर धर्म का नहीं है। क्योंकि उपवास में चारों प्रकार के आहार का त्याग होता है यदि चारों प्रकार के अहार का त्याग नहीं किया गया तो उसे उपवास नहीं कहते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रश्न—मुनि लोगों को जब अंतराय हो जाता है तब वह भी तो कुरला करते है न ?

उत्तर—सुनो, मुनियों के उपवास तो है नाहीं, भोजन करने गये है अंतराय हो जाने से कुरली कर लेते है। अगर तुम्हारी सी तरह उपवास हो तो हरगिज भी जल को नहीं ले सकते।

क्या करें आजकल हमारी समाज में आगम पंथ चला है। वह लोग ऐसा मानते हैं कि जो कुछ भी पोथी में लिख दिया सो ही आगम है। यह नहीं विचारते कि हमारी पूर्वजों की परम्परा क्या है। क्यों कि आजकल के लोग इस पंचम काल में पतित होने वाले ज्यादा हैं। अव्रती तो फिर भी डरते हैं परन्तु व्रती लोगों ने तो डरना छोड़ ही दिया। जो दिल में आई सो कर लिया और उसी में धर्म मान लिया।

जिनेन्द्र भगवान का धर्म विवेक रूप है न कि और रूप धर्म विवेक में है। शास्त्रों में लिखा है ग्रन्थ की रचना चार प्रकार से होती है सो सुनो।

१—आगम का सेवन।

२—युक्ति का अवलम्बन।

३—परम्परा से गुरुओं का उपदेश।

४—स्वसम्वेदन ज्ञान।

इनके बिना ग्रन्थ रचना होती ही नहीं। परन्तु आजकल के लोग उठाई कलम, लीना कागज और जो मन में आई सो ही लिख दिया। हो गया ग्रन्थ। इसही को मानने वाले आगम

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पंथी कहलाने लग गये। वह यह नहीं विचारते कि हमारा जैन धर्म भगवान केवली का कहा हुआ है। वह कैसे हिंसा रुप व्याख्यान देवेंगे। देखो हमारे यहाँ शास्त्रों में पूजन का उपदेश देना मुनियों के लिये भी मना है तो मुनि किस प्रकार खड़े रह कर पूजन या अभिषेक करा सक्ता है सो ही बताते हैं—

आलोंचना तनूत्सर्गः पूजोद्देशेऽप्रबोधने।
सोपस्थाना स कृद्देया, क्षमाकल्याणकंमुहुः ॥७७॥

प्रायश्चित चूलिका टीका पं० पन्नालालजी सोनी ब्यावर कृत।

अर्थ—पूजा सम्बन्धी आरंभिक दोषों को न जानने वाले मुनि को वार पूजा का उपदेश देने पर आरंभ का परिमाण जानकर आलोचना अथवा कायोत्सर्ग प्रायश्चित प्रतिक्रमण सहित उपवास पर्यन्त है तथा वार वार पूजोपदेश दे तो कल्याणक प्रायश्चित है।

जाननस्यापि संशुद्धिः, सकृच्चासकृदेवच।
सोपस्थानं हि कल्याणं, मासीकं मूलमावधे ॥७८॥

अर्थ—जो मुनि पूजारम्भ से दोषों को जनता हो वह यदि पूजा के आरम्भ का एकवार उपदेश दे तो उसके उस अपराध की शुद्धि प्रतिक्रमण सहित कल्याणक है और वार वार उपदेश दे तो उसकी मासिक पंचकल्याणक शुद्धि है तथा जिस पूजोपदेश देने से छह निकाय के जीवों का बध होता है तो उस का प्रायश्चित पुनर्दीक्षा है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तब जो छद्मस्थ हैं और वे पूरी तौर से हिंसा को भी नहीं समझते प्रत्यक्ष में उनको भी पूजा का उपदेश देना सिद्धान्त नहीं बतलाता ऐसी अवस्था में साक्षात प्रत्यक्ष हिंसा को देखनेवाले केवली भगवान पूजा का उपदेश कैसे देवेंगे ?

सो ही पात्र केशरी स्तोत्र में स्वामी नित्यानन्द महाराज ने बतलाया है—

विमोक्षसुखचैत्यदानपरिपूजनाद्यात्मिकाः—
क्रियाबहुविधासु भृन्मरणपीड़नाहेतवः ।
त्वया ज्वलितकेवलेन न हि देशिताः किं तुता—
स्त्वयि प्रसृतभक्तिभिः स्वयमनुष्ठिताः श्रावकैः ॥३७॥

अर्थ—जाज्वल्यमान केवलज्ञान कर युक्त ऐसे जिनेन्द्र देव ने हिंसा जनक आरम्भरूप उपदेश नहीं दिया क्योंकि मंदिर बनवाना, पूजा, अभिषेक करना, पानी छानना, द्रव्यसोधना, द्रव्यधोना, पंचामृत मिष्ट घृत, दुग्ध, दही, इक्षुरस और कई वनस्पतियों का चढ़ाना, जिनके निमित्त से चींटियों का आना और जीवों का घात होना सम्भवता है ऐसे हिंसक आरम्भ का उपदेश जिनेन्द्र भगवान कैसे दे सकते हैं। कारण जिनके जाज्वल्यमान केवलज्ञान हो उनके हिंसाजनक कार्योपदेश कैसे ? हे भाई भव्यजन हो विचारो स्वामी विद्यानंद जी महाराज कहते हैं कि ऐसे कार्य को हमलोग मुनिराज छदमस्थी भी नहीं कर सकते। कारण इससे अहिंसा महा व्रत मूल से ही नष्ट हो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाता है। इसलिये ऐसी क्रिया भक्त जन श्रावकों ने स्वयं अपना ली है। भगवान का ऐसा उपदेश नहीं है जैसा कि आज हो रहा है। न मालुम इन भक्त लोगों ने कहाँ से अपना लिया।

हे भव्यजीवो! एक नई बात और आप सुनो। आजकल के मुनि लोगों ने एक नई रीती चालू की है जो आजतक आपने सुनी ही नहीं है। ये रिवाज वैष्णव सम्प्रदाय की है। जैसे एक पट्ट पर भगवान जिनेन्द्रदेव की प्रतिमा जी को विराजमान कर देते हैं और ऊपर एक तिपाई रख देते हैं और उस तिपाई पर एक जल का घड़ा जिसके पींदो में छोटासा सूराक कर देते हैं फिर उस घड़े में पानी भर देते हैं सो उस घड़े में से पानी की धारा जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा जी पर पड़ती रहती है। जैसे ग्रीष्म ऋतु में वैष्णवों के यहाँ महादेव जी पर जलेरी लगाते हैं ऐसे हमारे यहाँ भी लगाने लग गये। अब क्या बाकी रहा। एक मुनिराजने उदयपुर के आयड नाम के ग्राम में भगवान श्री जिनेन्द्र देव की प्रतिमा जी के मुँह में सबने कलाकंद धरवा दिया था अब क्या रहा भगवान की प्रतिमा जी को आचमन कराया। देखो अब वैष्णव सम्प्रदाय में क्या बाकी बच रहा है, जैनी भाई ही विचारा, जैन धर्म बड़े २ महा ऋषि से आराध्य था और निवृत्ति मार्ग की प्रधानता थी जिसे आज के युग के महा पुरुषों के कषाय के वशीभूत होकर क्या मटिया मेट करना चाहा है। इसलिये एक कवि ने कहा है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा

जैन धर्म जिन देव से, रो रो करे पुकार ।
हमें छोड़ तुम शिव गये, कर कुपात्र आधार ॥१॥

हे भव्य जीवो ! जिन देव का उपदेश वताकर आगमपंथ क्या क्या धर्म के वहाने बिलकुल विपरीत मार्ग कर्तव्य सामने लाता है। इससे ऐसे मार्ग से बचने की कोशिश कर पापसे बचकर पुण्य कार्य के संचय करने की दृढ़ता करो।

इस पुस्तक में कहने का तात्पर्य ये है कि जो भी कार्य करने का विचार हो उस कार्य की व्यवस्था को पहिले सोचना चाहिये कि ये बात (या ये कार्य) हमारे धर्म से या हमारे पूर्वजों के मंतव्य से या हमारे आगम से या हमारे व्यवहार धर्म से मिलता है या प्रतिकूल है ? ऐसा विचार विवेकी जनों को करना लाजिमी है मगर आजकल के लोग विचार करते नहीं। यही हमारे धर्म शिथिलता का कारण है।

इसलिये जैनियों को अपने अहिंसा धर्म की पुष्टी करने के लिये जो जो कार्य सिद्धान्त से नहीं मिलते हों उन्हें शीघ्र छोड़ देना चाहिये।

हे भव्य जीवो ! यह जैनधर्म अनादि काल से जीवों का पीहर है, इसके द्वारा प्राणिमात्र को सुख और शान्ति मिलती है। इतर धर्म वाले भी हिंसा को पसन्द नहीं करते, फिर जनी लोग पंचामृताभिषेक करके हिंसा से क्यों नहीं बचते। यह कलिकाल का माहात्म्य है महाभारत के शान्ति पर्व में श्री भीष्म

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पितामह युधिष्ठिर से कहते हैं :—

"महातामपि दानानां कालेन हीयते फलम् ।
भीताभयप्रदानस्य क्षय एव न विद्यते" ॥ १ ॥
कपिलानां सहस्त्राणि यो विप्रेभ्यः प्रयच्छति ।
एकस्य जीवितं दद्याद् न च तुल्यंयुधिष्ठिर" ॥ २ ॥
"दत्तमिष्टं तपस्तप्तं तीर्थसेवा तथा श्रुतम् ।
सर्वंप्यभयदानस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्" ॥३॥
"नातोभूयस्तपोधर्मं वदन्योऽस्ति भूतले ।
प्राणिनां भयभीतानामभयं यद् प्रदीयते" ॥४॥
"हेमधेनुधरादीनां दातारः सुलभा भुवि ।
दुर्लभः पुरुषोलोके यः प्राणिष्वभयप्रदः" ॥५॥
"यथा मे न प्रियोमृत्युः सर्वेषां प्राणिनां तथा ।
तस्माद्मृत्युभयान्नित्यंत्रातव्याः प्राणिनोबुधैः" ॥६॥
"एकतः क्रतवः सर्वे समग्रवरदक्षिणाः ।
एकतो भयभीतस्य प्राणिनः प्राणरक्षणम्" ॥७॥
एकतः काञ्चनो मेरुर्बहुरत्ना वसुन्धरा ।
एकतो भयभीतस्य प्राणिनः प्राणरक्षणम् ॥८॥

"हे युधिष्ठर ! जो फल प्राणियों को दया देती है वह चारों वेद भी नहीं देते और न समस्त यज्ञ ही, तमाम तीर्थों का स्नान, वन्दन भी वह फल नहीं दे सकता। और भी कहा है— दुर्गन्धयुक्त नाली में कीड़े को और स्वर्ग में इन्द्र को जीवन की आकांक्षा तथा मृत्यु का भय दोनों को समान है। बड़े से बड़े दान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

का भी फल कुछ काल में क्षीण हो जाता है। किन्तु भयभीत को अभय दान का फल कभी क्षीण नहीं होता। एक हजार गायों के ब्राह्मणों को दान देने का वह फल नहीं जो एक जीव को जीव दान देने का है। इष्ट वस्तु का दान, बड़े बड़े तपों का तपना और तीर्थों की सेवा करना ये सब अभयदान के सोलहवें भाग के समान भी नहीं है। स्वर्ण, गौ, पृथ्वी आदि के दाता बहुत हैं किन्तु प्राणियों को अभय दान देने वाला कोई विरलाही होता है।"

महाभारत में जैनों को विरला प्राणी बताया है, परन्तु जैनों ने विवेक हीन होकर पंचामृत अभिषेक करके जैनधर्म की अहिंसा की फिलोस्फी पर पानी फेर दिया। कहाँ तक कहा जावे। हम तो यह भावना करते हैं कि हे जिनेन्द्रदेव इन लोगों को सद्-बुद्धि प्राप्त हो, जिससे ये हिंसा जनक कार्यों से बचकर अपने आत्म कल्याण में लगें।

यह ग्रन्थ सं० २००८ कार्तिकशुक्ला ६ बुधवार ता० ७-११-५१ वीर निर्वाण सं० २४७८ इन्द्रप्रस्त नगर में यानि (देहली चतुर्मास में) लिखा गया।

११८५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री गणेश वर्णी दि. जैन (शोध) संस्थान
पुस्तक सं. ११०२५
दिनांक
नरिया, (का. हि. वि. वि.) वाराणसी-५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi